CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ानोदय पुस्तक माला पुष्प–१३

पनिषद

वतरोपनिषद् प्रकाश

एवम् परमर्षि कपिल रचित तत्त्व समास
बोध गम्य व्याख्या)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव !
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देवं ॥

लेखक
गणेश चौबे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दु. नं. ६४८८
वा०वि०पु०

वेदान्त १३८

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज्ञानोदय पुस्तक माला पुष्प-१३

श्वेताश्वतरोपनिषद् प्रकाश

(श्वेताश्वतरोपनिषद् एवम् तत्त्व समास की बोधगम्य व्याख्या)

लेखक—गणेश चौबे

लेखक पं० गणेश चौबे, निवासी ग्राम कोठरा,
पो० मोफर, थाना सासाराम, जिला शाहाबाद
बिहार प्रदेश, अपने सुपुत्र रमेश के साथ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकाशक :
श्री किशोरी प्रसाद
मंत्री ज्ञानोदय पुस्तकमाला प्रकाशन समिति
व्रास आर्टस् पैलेस, चर्च रोड, राँची, बिहार
फोन नं० ८८५

सर्वाधिकार लेखकाधीन
प्रथम संस्करण सन् १९७०
मूल्य : १·२५ पैसे

पुस्तक मिलने का पता :
गणेश चौबे
क्वाटर नं० ११, न्यू ले आउट,
नामदा बस्ती
पो० गोलमुरी, जमशेदपुर
बिहार प्रदेश

मुद्रक :
सुपरफ़ारन प्रिंटर्स,
१-सी. बाई का बाग,
इलाहाबाद ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Funding: MIDF

द० नं० ६४८८

प्रार्थना

जग जीवन में जो चिर-महान्,
सौन्दर्य-पूर्ण औ, सत्य-प्राण,
मैं उसका प्रेमी बनूं नाथ,
जो हो मानव के हित समान।

जिससे जीवन में मिले शक्ति,
छूटे भय, संशय, अंध भक्ति,
मैं वह प्रकाश बन सकूं नाथ,
मिल जांय जिसमें अखिल व्यक्ति।

पाकर प्रभु, तुम से अमर दान,
करने मानव का परित्राण,
ला सकूं विश्व में एक बार,
फिर से नव जीवन का विहान।

—सुमित्रानंदन पंत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूची-पत्र

विषय

१—नम्रनिवेदन	....	४
२—प्रस्तावना	....	६
३—प्रकृति, पुरुष और पुरुष विशेष	....	१५
४—द्वैत और अद्वैतवाद	....	१६
५—सांख्य और योगदर्शन	....	१७
६—परमर्षि कपिल रचित तत्त्व समास	....	१८
७—शब्दार्थ—	....	
८—श्वेताश्वतरोपनिषद् प्रकाश अध्याय १	....	३४
९— " " अध्याय २	....	४५
१०— " " अध्याय ३	....	५३
११— " " अध्याय ४	....	६१
१२— " " अध्याय ५	....	७१
१३— " " अध्याय ६	....	७८

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नम्र निवेदन

प्रिय पाठक, पाठिकाएँ;

हरिस्मरण !

श्वेताश्वतरोपनिषद् प्रकाश हमारी तेरहवीं रचना है। इस उपनिषद् में महर्षि श्वेताश्वत्तर ने जिज्ञासु संन्यासियों को ब्रह्म के साक्षात्कार के लिए, ध्यान योग की सिद्धि का साधन बतलाया है। ब्रह्म के स्वरूप और माहात्म्य का वर्णन भाँति-भाँति से किया है।

महर्षि की वाणी को मैंने सरल और सुबोध भाषा में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् की चर्चा के पहले प्रसंगवश, प्रकृति, पुरुष और पुरूष विशेष, द्वैतवाद-अद्वैतवाद, सांख्य-योग दर्शन एवम् परमर्षि कपिल द्वारा रचित तत्व समास की चर्चा की गई है। वास्तव में इसकी जानकारी मुझे स्वयम् के लिए आवश्यक प्रतीत हुई; साथ-साथ अपने सामान्य उन-पाठक-पाठिकाओं के लिए भी। हम चाहते हैं कि हम सब आगे के गूढ़ आध्यात्म तत्वों को समझने की क्षमता साथ-साथ प्राप्त करते चलें। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए गूढ़ शब्दों के अर्थ भी रचना में देते आ रहे हैं। इस में भी दिया है। हम ध्यान से पढ़ें; मनन करें और अपनाते चलें। यह हुई ज्ञानार्जन की बात ! साथ-साथ अनमोल उपदेशों को जीवन में भी उतारते जायें; तभी पढ़ना सार्थक !

जीवन भर सद्ग्रंथों के निरा पठन-पाठन करते रहने भर से, प्रवचनादि सुनते रहने भर से ही विशेष कुछ लाभ नहीं होता लाभ। तो होता है, पढ़े और सुने विषयों को कार्यान्वित करने से, उन्हें जीवन में उतारने से; उनके अनुरूप अपने जीवन को ढालने से। हम इसके लिए यथेष्ट प्रयास करें। सब के लिए, सब कुछ एकबारगी जीवन में, उतारना जरा कठिन है। धीरे-धीरे एक-एक कर उतारें। आचरण में लायें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यह भगवत् सृष्टि बड़ी मायावी है; बड़ी निराली है, इसकी चाल विरले वूझ पाते हैं। इसकी अच्छाई-बुराई के व्यर्थ की चर्चा में अपने दुर्लभ मानव जीवन की शुभ घड़ियों को न खोवें। समय रहते अपना काम वना लें। अपना लोक पर लोक संवार लें। दुनिया तो युग-युग से ऐसे ही चलती आ रही है—और चलती रहेगी। दुनिया को सुधारने के वजाय, अपने को सुधार लें। दुनिया को वनाने के वजाय अपने को वना लें। और जिस हद तक हम अपने को वना लेंगे, उस हद तक दुनिया आप से आप वन जाएगी। आखिर हम इसका अंग ही तो हैं।

दूसरे के घर बुहारने जाने के पहले अपना घर तो वुहार लें अपने भीतर के कचरे तो निकाल लें !! अपनी काया तो निर्मल कर लें !!! फिर, वेशक अपने सम्पर्क, वाणी और प्रयास से दूसरों को भी निर्मल करें। अव-तक लोग ऐसा ही करते आये हैं—वुद्धदेव ने तप कर, पहले स्वयम् ज्ञान प्राप्त किया। स्वामी शंकराचार्य ने भी वैसे ही किया। अन्यों ने भी वैसा ही। फिर औरों की भलाई में लगें। निश्चय ही ये सभी महान धर्म प्रवर्त्तकों में हैं। किन्तु हम साधारण स्तर पर भी ऐसा ही वरतें।

कुछ लोग कहते हैं,—"कामों में समय कम और साधना में ज्यादा देने लगा हूं।" यह स्थिति सही नहीं। भगवत् भजन पूजा-पाठ, ध्यानादि भर को एक मात्र साधना समझना-भारी भूल है। वास्तव में हम से जितनी भी क्रियाएँ—सोना, उठना-बैठना, मुंह धोना, स्नान करना, खाना-पीना, रसोई बनाना, गौवें चराना, खेतों में काम करना, पढ़ना-पढ़ाना आदि-आदि होती हैं—समस्त साधना के अंग हैं। हम किसी की भी अवहेलना नहीं कर सकते। शरीर के व्यापार को चलाने में हमें जो, जो कर्म करने होते हैं, सभी साधना के अंग हैं। सव को हम प्रीतिपूर्वक श्रद्धा-भक्ति से करें। जिस पवित्रता और भावना से एक श्रद्धालु पुजारी भगवान को नहलाता है और खिलाता है; उसी पवित्रता और भावना से अपने भी नहाए और अपने बच्चों को भी नहलाएँ, खिलाएँ, पिलाएँ।

अरे ! हम स्वयम् भी तो ब्रह्म हैं। हम पर आश्रित बच्चे एवम्

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परिवार के अन्य लोग, दूसरे-तीसरे-सब के सब तो ब्रह्म ही हैं। इन्हें क्यों विलगावें !

अतएव, निरंतर साधना में लगे रहें। अपने समस्त नियत कर्मों को, साधना रूप में भगवान के पूजा स्वरूप ही करें।

मैं सरकारी नौकरी में हूँ। मुझे हर महीने वेतन मिलता है। उसके लिए मुझ पर कुछ कार्यभार विभाग की ओर से सौंपा गया है, जिसको वहन करने के लिए हमें कार्यरत रहना है। इस संबंध से किए जाने वाले, हमारे सभी काम, हमारी साधना के अंग हैं। उन्हें श्रद्धा भक्ति तत्परता और प्रीति से करते ही, हम भगवान को प्राप्त कर सकते हैं। इनकी अवहेलना कर घंटों पूजा-पाठ पर बैठा रहना भारी भूल होगी।

हमारे कर्मों के फल भी भावना के अनुसार, ही उत्तम-मध्यम, न्यूनाधिक मिलते हैं। कर्म संपादन से ज्यादा प्रधानता भावना की है। शुद्ध भावना से, भगवान के पूजा स्वरूप, किए गए हर कामों का फल, मुक्ति दिलाने वाला सुमधुर होता है; वही विपरीत भावना से किए जाने पर उनका फल, हमें अधोगति में पहुँचाने वाला विषवत होता है। अतएव, अभ्यास करें—हर काम को पवित्र भावना से करने को यानी निःस्वार्थ भाव से प्रीति और श्रद्धा भक्ति के साथ भगवान के पूजा स्वरूप।

पूजा-पाठ योग ध्यान की विधि और अवधि भी सब साधक के लिए एक-सी नहीं होती। जो घर-बार छोड़ कर साधु-सन्यासी हो गए हैं, वे चाहें जितनी देर पूजा, ध्यानादि में रहें किन्तु हम गृहवासी उनकी देखा-देखी नहीं कर सकते। भगवान् की प्राप्ति के लिए इसकी आवश्यकता भी नहीं है। जो वे वहाँ पाते हैं वह हम अपने गृहस्थ-जीवन में ही पा सकते हैं। घर-बार देखते जीवन के समस्त व्यापार चलाते ही। उनको और उनकी तपस्या को देखकर, हम ललचायें नहीं।

आइए, ईश-वन्दना के संबंध से भी कुछ बातें कर लें—

प्राचीन तथा अर्वाचीन लेखकों और कवियों ने, प्रभु-प्रार्थना में खूब रोया, गिल-गिलाया है; अपने को पापी, महापापी, घोर पातकी, पतित से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पतित बतलाया है। हो सकता है; उनसे वैसे अघोर पाप हुए हों। उन्हें पश्चाताप हुआ हो, और उन्होंने हृदय की बात कही हो। परन्तु आम तौर से हम अपने को वैसा नहीं मानते। फिर भी भगवान के सामने हम उन लेखक-कवियों की कही बातें दुहराते हैं। हम अपने को भगवान के सामने प्रार्थनादि में पापी, महापापी कहते हैं। किन्तु दूसरा कोई हमें वैसा कहे-तो हम नाराज हो जाएँगे। कहेंगे—"हम पापी नहीं हैं।"

इसका मतलब, हृदय से हम अपने को पापी नहीं मानते। भगवान को रिझाने के लिए, निरा ऊपर से कहते हैं। निश्चय ही, उक्त प्रकार से भगवान के सामने कहना, कपट व्यवहार हुआ। भला, कपट व्यवहार से भगवान कभी रिझेंगे। कदापि नहीं।

वास्तव में हमें भगवान के सामने सम्मान पूर्वक जाना है। उनके दरबार में आत्म-सम्मान के साथ प्रवेश करना है। उनसे प्रार्थनादि में हृदय की बात कहनी है। बनावटी नहीं। बेकार के रोने-गिलगिलाने की कतई आवश्यकता नहीं। भगवान एक मात्र पतितों के लिए ही नहीं हैं, पुण्यवानों के लिए भी हैं। महा पापी कहलाने की कतई आवश्यकता नहीं।

हम सभी ब्रह्म रूप ही हैं। अपने को हेय व हीन समझना या यों ही बताना भारी भूल है।

अब विदा लेता हूँ। अगली रचनाओं में, फिर मिलूंगा। मेरी रचनाएँ आप सबों के थोड़ा भी काम आजाएगी तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा। जब तक तन में प्राण है—आप सबों के मंगल की कामना करता रहूँगा।

जय विश्व !

आप सबों का आत्मरूप

गणेश

(लेखक)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रस्तावना

प्रिय मित्र ! जमशेदपुर

सादर प्रणाम ! २४-८-६९

हमारी बारहवीं रचना संत समागम भी समाप्त हो चुकी है। तेरहवीं रचना—श्वेताश्वतरोपनिषद् प्रकाश—प्रारम्भ की जा रही है। रचनाएँ ही आपके पास बैठने के एकमात्र साधन हैं। ये ही भगवान की पूजा हैं, ये ही आराधना और अर्चना हैं।

प्यारे मित्र ! लिखते समय, मैं अपने आप को भूल जाता हूँ। मन विषय प्रसंग में रम जाता है। बिल्कुल केन्द्रित हो जाता है। ऐसे समझिए समाधि ही लग जाती है।

हाँ, आपकी याद निरंतर आती रहती है। यह प्रेरणास्पद ही होती है। भारी संतोष होता है कि ये मेरी पंक्तियाँ आप—उस व्यक्ति के द्वारा पढ़ी जाएँगी; जिसके लिए, मेरे दिल में प्रेम अथाह है, और जिसके दिल में मेरे लिए भी; मुझ से कुछ ज्यादा ही। और लोग पढ़ेंगे या न पढ़ेंगे, यह तो बाद की बात है। कम से कम, आपके रूप में एक व्यक्ति तो है, जो मेरी रचनाओं को निरन्तर पढ़ने के लिए लालायित है। वास्तव में यही एकमात्र मेरे लिए श्रोत शक्ति है।

एक रचना समाप्त होने के साथ-साथ दूसरी शुरू न करने पर मन खोया-खोया-सा रहने लगता है। ऐसा लगता है, मानो विना काम का हो गया हूँ। जैसे हो दूसरी शूरू करता हूँ, मन उसमें लग जाता है। फिर तो आनन्द कानन में विचरने लगता हूँ। अपने को भगवान और आप, दोनों के समीप पाता हूँ। दोनों को एक रूप ही

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पाता हूँ। भगवान और आप दोनों में एक दूसरे की झाँकी मिलती है।

आइए, भगवान का स्मरण और ध्यानकर, श्वेताश्वतरोपनिषद् की चर्चा करें !

पहले उपनिषद् शब्द का माने जान लीजिए। उपनिषद् का शब्दार्थ समीप बैठना है। इसका भावार्थ है—वह विद्या है, जिससे अज्ञान का नाश होता है; तथा जिसके द्वारा परमात्मा की प्राप्ति होती है। अर्थात् उपनिषद् के पठन-पाठन श्रवणादि से ज्ञान-रोशनी मिलती है; जिससे हृदय का निविड़ अंधकार रूपी अज्ञान दूर होता है। ब्रह्म की जानकारी हो जाती है। मानो भगवान के समीप हो जाते हैं।

प्यारे मित्र ! उपनिषद् वेद के अंत—वेदान्त कहलाते हैं। प्रसिद्ध उपनिषद् १०८ हैं। प्रत्येक भिन्न-भिन्न ऋषियों द्वारा प्रणीत हैं। ऋषियों ने वेद में बीज रूप में उल्लेखित गूढ़ तत्वों को उपनिषदों में, विस्तार में समझाया है। इसीलिए ये वेदान्त भी कहलाते हैं। ऐसे तो आप उपनिषदों से परिचित ही हैं। हम लोगों ने कठोपनिषद् और मुण्डकोपनिषद् की चर्चा की ही है।

प्यारे मित्र ! उपनिषदों के रचना काल का ठीक-ठीक पता नहीं चलता। तब, ये हैं, अति प्राचीन। वेद के बाद इनका ही स्थान आता है। जब इनकी रचना हुई थी; निश्चय ही हमारा देश विद्या और ब्रह्म चिन्तन में उन्नत के शिखर पर पहुँच चुका था। हमारे ऋषिगण तब जंगलों में नदी तट पर पर्णकुटी बना, रहा करते। वल्कल पहिनते। जंगल के कंद-मूल, फल खाते। नदी और सरोवर के जल पीते। तपश्चर्या में लीन रहते। भगवत् ज्योति प्राप्त कर, लोकहित सद्ग्रन्थों की रचना करते।

प्यारे मित्र ! हमारे वेद, वेदान्त, श्रुति, स्मृति आदि आर्ष ग्रन्थ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इन्हीं ऋषियों की देन है। इन्होंने अपने सुख-स्वार्थ की तिलाञ्जलि देकर, तन को तपा-तपाकर, इन ग्रन्थों की रचना की। इनके अधिकांश ग्रन्थ तो काल की गाल में चले गए। बहुतों को विदेशी आक्रमणकारियों ने जला डाला। **प्यारे मित्र**! हम इन ऋषियों के भारी आभारी हैं। इन्हें शत-शत प्रणाम है।

प्यारे मित्र! श्वेताश्वतरोपनिषद् कृष्ण यजुर्वेद के अन्तर्गत है। इसके वक्ता महर्षि श्वेताश्वतर हैं। इसी लिए श्वेताश्वतरोपनिषद् कहलाता है। जगत का उत्पति—कारण क्या है? जीव कहाँ से आया है? कैसे जीवन धारण किया? किसकी प्रेरणा से दुःख-सुख भोगता है? आदि की चर्चा ऋषि ने सविस्तार की है।

ऋषि ने ब्रह्म का सविस्तार वर्णन बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है।

प्यारे मित्र! श्वेताश्वतरोपनिषद् छह खण्डों में निम्न प्रकार से विभाजित है :—

क्रम संख्या	अध्याय	श्लोक संख्या	विषय
१	पहला अध्याय	१६	परमात्मा के साक्षात्कार का साधन बतलाया गया है।
२	दूसरा अध्याय	१७	ध्यान योग की सिद्धि के साधन बतलाए गए हैं।
३	तीसरा अध्याय	२१	नाना प्रकार से ब्रह्म का वर्णन किया गया है। और उसका साक्षात्कार ही मुक्ति का मार्ग बतलाया गया है।
४	चौथा अध्याय	२२	सद्बुद्धि और मुक्ति के लिए ब्रह्म की स्तुति की गई है। एवं ब्रह्म के स्वरूप और महत्व का वर्णन किया गया है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

५	पाँचवाँ अध्याय	१४	विद्या-अविद्या तथा ब्रह्म के स्वरूप और महात्म्य का वर्णन हुआ है; तथा यह भी बतलाया गया है कि जीव अपने कर्मानुसार भिन्न-भिन्न योनियों में जन्मता है।
६	छठवाँ अध्याय	२३	परमात्मा के स्वरूप व महात्म्य का पुनः वर्णन इस अध्याय में भी हुआ है। एकमात्र उसी के ज्ञान से सारे दुःखों की निवृत्ति वतलाई गई है।

प्यारे मित्र ! श्वेताश्वतरोपनिषद् में उपर्युक्त प्रकार से ११३ ही श्लोक हैं। पुस्तक आकार में बड़ी नहीं है, पर है ज्ञान का भण्डार ही।

प्यारे मित्र ! ब्रह्म-जिज्ञासु सन्यासी ऋषि श्वेताश्वतर के आश्रम में आते हैं। ऋषि को सादर प्रणाम कर उन्हें ब्रह्मज्ञान का उपदेश देने के लिए विनती करते हैं। उन्हें ब्रह्म विद्या का अधिकारी जान कर, ऋषि उनकी प्रार्थना स्वीकार करते हैं। स्नेहपूर्वक अपने आश्रम में रखते हैं, और उन्हें ब्रह्म विद्या का उपदेश निशुल्क देते हैं। उन जिज्ञासु सन्यासियों को ब्रह्म की जानकारी हो जाती है। वे कृत्य-कृत्य हो, अपने-अपने स्थान को लौट जाते हैं। ऋषि श्वेताश्वतर द्वारा उन सन्यासियों से कही गई ब्रह्म-विद्या ही श्वेताश्वतरोपनिषद् के रूप में उपलब्ध है।

प्यारे मित्र ! ब्रह्म-विद्या का उपदेश प्रारम्भ करने के पहले, ऋषि शांति-पाठ करते हैं—कहते हैं—"भगवान हम—आचार्य और शिष्य—दोनों की साथ-साथ रक्षा और पालन करें। दोनों को ब्रह्म

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विद्या की योग्यता साथ-साथ प्रदान करें। हम दोनों की ब्रह्मचर्या साथ-साथ सफल करें। हमारे हृदय के विकारों को दूर करें ताकि हम किसी से द्वेष न करें। हमारे दैहिक, दैविक व भौतिक—तीनों प्रकार के ताप शांत होवें।"

प्यारे मित्र! ऋषि और उनकी शिष्य-मण्डली के साथ-साथ हम दोनों ने भी शांति का पाठ किया। भगवान हमारे हृदय के द्वेषादि विकारों को दूर करें। हमें ब्रह्म विद्या का अधिकारी बनावें और हमें अपनी जानकारी आप करावें।

प्यारे मित्र! अगले पत्र में अध्याय १ की चर्चा की जाएगी। आइए, ईश वन्दना कर विदा होवें :

मैं ढूँढ़ता तुझे था जब कुंज और वन में।
तू खोजता मुझे था तब दीन के सदन में॥

तू आह बन किसी की मुझको पुकारता था।
मैं था तुझे बुलाता संगीत में भजन में॥

मेरे लिए खड़ा था दुखियों के द्वार पर तू।
मैं बाट जोहता था तेरी किसी चमन में॥

बन कर किसी के आँसू मेरे लिए बहा तू।
मैं देखता तुझे था माशूक के बदन में॥

दुख से रुला-रुला कर तूने मुझे चिताया।
मैं मस्त हो रहा था तब हाय! अंजुमन में॥

बाजे बजा-बजा कर मैं था तुझे रिझाता।
जब तू लगा हुआ था पतितों के संगठन में॥

मैं था विरक्त तुझ से जग की अनित्यता पर।
उत्थान भर रहा था तब तू किसी पतन में॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तू बीच में खड़ा था बेवश गिरे हुओं के।
मैं स्वर्ग देखता था झुकता कहाँ चरण में ॥

तूने दिये अनेकों अवसर न मिल सका मैं।
तू कर्म में मगन था मैं व्यस्त था कथन में ॥

प्यारे मित्र ! उपर्युक्त पंक्तियों के भाव बड़े गंभीर हैं। दीन दुखियों के काम आवें। तन को परायी सेवा में लगावें। भगवान की खोज में अन्यत्र भटकने के बजाय अपने भीतर ही टटोलें। मित्र! आप पर निश्चय ही भगवत् कृपा हुई है। ज्ञान रोशनी मिलती-सी लगती है। साधना पथ पर बढ़ते चलें ब्रह्म की प्राप्ति हुई ही जानें। भगवान आप को सुख-शांति प्रदान करें। जग में कीर्ति देवें।

आप को अनन्त शुभ कामनाओं के साथ पुनः प्रणाम।

आपका आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकृति और पुरुष

प्रिय मित्र, जमशेदपुर

सादर प्रणाम ! २४-९-६९

आज दिन का यह दूसरा पत्र है। दोनों साथ मिलेंगे।

पिछले पत्र में, आप का परिचय श्वेताश्वतरोपनिषद् और इसके वक्ता महर्षि श्वेताश्वतर से करा चुका हूँ।

प्यारे मित्र ! आइए, इस उपनिषद् से संबंधित कुछ प्रारंभिक बातें, शुरू में ही जान लेवें, ताकि विषय प्रसंग को समझने में सुविधा होवे।

प्यारे मित्र ! आत्मा (पुरुष) प्रकृति (माया) और परमात्मा (पुरुष विशेष)—ये तीन मुख्य तत्व हैं। आत्मा और परमात्मा दोनों चेतन है। इनमें चेतनत्व है। प्रकृति जड़ है।

आत्मा को बोलता जीव तथा पुरुष कहते हैं। आत्मा और परमात्मा दोनों जीवधारी की देह में निवास करते हैं। आत्मा (जीव) कर्म फल को भोगता है। इससे कर्म पाश में बँधता है। परमात्मा द्रष्टा है—सिर्फ देखता भर रहता है। वह कर्म-फल को भोगता नहीं।

प्यारे मित्र ! प्रकृति ही ईश्वर की माया कहलाती है। यह जड़ है। परमात्मा, की इच्छा मात्र से प्रकृति ही सृष्टि रचती है। यही संचालित करती है। जीव को भोग प्रदान भी यही करती है। मित्र ! प्रकृति की चाल निराली है। बूझी नहीं जाती। जड़ होकर भी यह चेतन-सी भासती है। मित्र ! जीव है, आत्मा का अंश ही है। यह परमात्मा स्वरूप ही है; लेकिन प्रकृति आत्मा और पर-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मात्मा के बीच दोवाल बनकर रहती है। आत्मा को परमात्मा से मिलने नहीं देती। जीव को आत्मा होने का भान होने नहीं देती। भ्रमवश जीव, जड़ प्राकृति को चेतन बूझता है। अपने को प्रकृति समझता है।

आत्मा, परमात्मा और प्रकृति—इन तीनों के वास्तविक रूप को समझने के लिए हिन्दू धर्म शास्त्रों में छह रास्ते हैं; जिन्हें षड् दर्शन कहते हैं। वे ये हैं—(१) मीमांसा, (२) वेदान्त, (३) न्याय, (४) वैशेषिक, (५) सांख्य और (६) योग। ये छह दर्शन वेदों के उपाङ्ग कहे जाते हैं।

प्यारे मित्र! आइए, द्वैतवाद और अद्वैतवाद को भी समझ लेवें—

द्वैत माने दो, जोड़ा और अद्वैत माने दो नहीं, भेद रहित। वाद माने, तत्व के निर्णय के लिए बात-चीत।

द्वैतवाद—को मानने वाले जीव और ईश्वर को अलग-अलग मानते हैं। वे जीव और ब्रह्म दोनों को चेतन और एक जातीय मानते हैं किन्तु दोनों अलग-अलग अपनी सत्ता रखते हैं। परमात्मा सद्+चित्त+आनन्द = सच्चिदानन्द है। दुःख से परे आनन्द स्वरूप है; और जीव सुख-दुःख का भोक्ता है।

मुक्ति पा लेने पर जीव, परमात्मा को पाकर उसके समान आनन्द स्वरूप हो जाता है। मुक्ति पाने पर भी परमात्मा से अलग, उसकी अपनी सत्ता बनी रहती है। वह परमात्मा में मिलकर, एक नहीं हो जाता। अपनी सत्ता नहीं खोता।

अद्वैतवाद को मानने वाले—संसार को ब्रह्म का ही विस्तार मानते हैं। जगत की उत्पत्ति एक मात्र ब्रह्म से ही मानते हैं। वे आत्मा (जीव) को ब्रह्म का ही अंश मानते हैं। उसकी अलग से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सत्ता नहीं मानते। उनके मतानुसार मुक्ति पा लेने पर जीव ब्रह्म में मिल कर, एक हो जाता है। मित्र! समुद्र में मिलने पर नदी की अपनी सत्ता, खो जाती है। समझिए, वह भी समुद्र ही हो जाती है। वैसे ही अद्वैतवाद के अनुसार जीव ब्रह्म में मिलकर, ब्रह्म हो जाता है।

प्यारे मित्र। जड़तत्व के संबंध में भी अद्वैतवादी और द्वैतवादी भिन्न-भिन्न मत रखते हैं। अद्वैतवादी जड़ तत्व को ब्रह्म से ही उत्पन्न, ब्रह्म का ही विस्तार मानते हैं। अविद्यावश ही जड़तत्व ब्रह्म से भिन्न प्रतीत होते हैं। जैसे भ्रम से रस्सी को साँप मान लेते हैं, वैसे ही, चेतन ब्रह्म तत्व को जड़ तत्व मानते हैं।

वास्तव में, ब्रह्म से परे, जड़ तत्व का अलग से अपना अस्तित्व नहीं है। यह सत् नहीं है। फिर भी सारा संसार-व्यापार इसी में चलता है। इससे, इसे असत् भी नहीं मान सकते।

प्यारे मित्र! जड़ तत्व का ही नाम माया और प्रकृति भी है।

आगे जड़ तत्व के संबंध से द्वैतवादियों का मत सुनिए—

द्वैतवादी, जड़ तत्व की सत्ता अलग मानते हैं। इसे प्रकृति कहते हैं। उनके मतानुसार जीव के मुक्ति पा लेने पर, उस मुक्त जीव के लिए प्रकृति का प्रयोजन नहीं रहता। लेकिन अन्य अमुक्त जीवों के लिए बना रहता है। अतएव प्रकृति बनी रहती है। उसका अस्तित्व कायम रहता है।

सांख्य और योग दर्शन

प्यारे मित्र! ब्रह्म के चेतन स्वरूप का बोध कराकर, जीव को मुक्ति दिलाने वाले दो मुख्य सिद्धान्त—सांख्य और योग दर्शन हैं। ये दोनों भारतवर्ष के प्राचीनतम् फिलासफी (दर्शन) हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योग, चित्त वृत्तियों का निरोध करा कर, ब्रह्म का आभास कराता है; तो सांख्य तत्वों का सम्यक ज्ञान करा कर। ब्रह्म का भान हो जाने से, जीव को मुक्ति मिल जाती है।

प्यारे मित्र! पातञ्जल योग प्रकाश में योग की चर्चा सविस्तार हुई है। पाण्डुलिपि आपने पढ़ी ही है।

मित्र! सांख्य को ही ज्ञान योग व सन्यास योग भी कहते हैं। परमर्षि कपिल इसके प्रवर्त्तक माने जाते हैं। योग और सांख्य दोनों में, जीव ब्रह्म का आभास पाता है। प्रथम में चित्त वृत्ति निरोध के द्वारा, तो दूसरे में सम्यक ज्ञान के द्वारा। ब्रह्म के आभास प्राप्ति के ये—योग और सांख्य दो भिन्न-भिन्न मार्ग हैं। जीव दोनों में, किसी एक पर चलकर निर्वाण पा लेता है।

प्यारे मित्र! परमर्षि कपिल ही विश्व का प्रथम दार्शनिक माने जाते हैं।

परमर्षि कपिल के वाद, सांख्य शास्त्र के निम्नाङ्कित प्राचीन आचार्य माने जाते हैं :—आसुरि मुनि, पञ्चशिखाचार्य, पतञ्जलि, जैगीषव्याचार्य, वार्षगरायाचार्य, विन्धवासी (रुद्रिल), जनक पराशर (वादरी), व्यास, ईश्वरकृष्ण, भार्गव, उलूक, वाल्मीकि, हारीत, देवल-वाद्धलि कैरात, पौरिक, ऋषभेश्वर, पञ्चाधिकरण, कौडिन्य, मूक, गर्ग और गौतम (जय मङ्गला)।

सांख्य शास्त्र तत्व समास

सांख्य के मुख्य ग्रंथ—

प्यारे मित्र! सांख्य मत के प्रवर्त्तक परमर्षि कपिल मुनि द्वारा प्रणीत—तत्व समास—ही सांख्य का मुख्य ग्रन्थ है। इसके केवल वाईस सूत्र ही उपलब्ध हैं। संभवतः इसके कुछ सूत्र और इस मत के वहुत से ग्रन्थ काल के गाल में चले गए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सांख्य मत के अन्य ग्रन्थ—पञ्चशिखाचार्य के सूत्र, वार्षगण्याचार्य प्रणित षष्टि-तंत्र, सांख्य सप्तति, सांख्य सूत्र आदि हैं।

तत्व समास की चर्चा

प्यारे मित्र ! सांख्य शास्त्र को समझने के लिए, आइए, परमर्षि कपिल मुनि द्वारा प्रणित तत्व समास को जान लेवें—

अथातिस्तत्त्व समासः ।। १ ।।

तत्वों के ज्ञान से ही प्राणी दुखों को तर पाता है। इस लिए परमर्षि कपिल मुनि तत्वों की चर्चा करते हैं।

परमर्षि कपिल कहते हैं—

अष्टौ प्रकृतयः ।। २ ।।

मूल प्रकृति, महत्तत्व, अहंकार और पाँच तन्मात्रा—

शब्द तन्मात्रा, स्पर्श तन्मात्रा, रूप तन्मात्रा, रस तन्मात्रा और गन्ध तन्मात्रा—ये आठ प्रकृतियाँ हैं। (तन्मात्रा = सांख्य मत के अनुसार पंचभूत, अर्थात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध का सूक्ष्म अमिश्र रूप।)

षोड्स विकाराः ।। ३ ।।

पाँच स्थूल भूत, आकाश, वायु, जल और पृथ्वी, और ग्यारह इन्द्रियाँ —आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा—ये पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ; हाथ, पाँव, मुँह तथा मल-मूत्र के दो द्वार—ये पाँच कर्म इन्द्रियाँ और ग्यारहवाँ मन, ये सोलह विकृतियाँ हैं।

इस प्रकार से जड़ तत्व के प्रकृति और विकृति दो भेद हैं। प्रकृति के आठ भेद और विकृति के सोलह भेद, मिला कर, कुल चौबीस जड़ तत्व के भेद हुए। इनमें मुख्य तत्व प्रकृति ही है। प्रकृति से नये तत्व उत्पन्न होते हैं, किन्तु विकृति से कोई नया तत्व उत्पन्न नहीं होता।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्यारे मित्र ! प्रकृति जड़ होते हुए भी सदा सक्रिय रहती है। इससे निरंतर नूतन तत्व उत्पन्न होते रहते हैं। वृद्धि या क्षय के कार्य निरंतर होते रहते हैं।

आप अपने बाग के फूल को ही देखिए—वृद्धि-अवस्था में उसमें वृद्धि प्रति क्षण होती ही रहती है। क्षीणावस्था में क्षय भी होता ही रहता है।

आगे परमर्षि कपिल कहते हैं—

चेतन तत्व पुरुषः ॥ ४ ॥

पुरुष चेतन तत्व है।

प्यारे मित्र ! उपर्युक्त चौबीस तत्वों से परे पचीसवाँ तत्व—पुरुष—है। पुरुष का अर्थ जीव आत्मा और परमात्मा लगाया जाता है। परमात्मा पुरुष विशेष भी कहलाता है।

आगे प्रकृति के गुणों का वर्णन सुनिए—

त्रैगुण्यम् ॥ ५ ॥

(प्रकृति के चौबीसों जड़ तत्व सत्त्व रज और तम) तीन गुण वाले हैं।

प्यारे मित्र। सत्व प्रकाश रूप है। रजस क्रिया रूप है और तमस् स्थिति रूप है। हर वस्तु में, ये तीनों गुण विद्यमान रहते हैं। जो वस्तु स्थिर है; उसमें क्रिया आती है। क्रिया के वेगवती होने पर, उसमें प्रकाश आता है। तब सत्व प्रधान रहता है। रजस और तमस् नगण्य रहते हैं। वस्तु की क्रियाशीलता अवस्था में रजस प्रधान रहता है। सत्य और तमस् नगण्य रहते हैं। क्रियाशीलता के वाद वस्तु में स्थिरता आती है। तव तमस् प्रधान रहता है। शेष दो नगण्य रहते हैं। पर विद्यमान रहते हैं। उनका सर्वथा अभाव नहीं होता।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अब आगे का सूत्र सुनिए—

संचरः प्रयि संचरः ॥ ६ ॥

सृष्टि और प्रलय (का क्रम चलता ही रहता है।)

प्यारे मित्र ! इस सूत्र में सृष्टि की रचना और प्रलय बतलाया जाता है। प्रकृति के चौबीस तत्वों में सोलह विकृति हैं; जिनकी चर्चा ऊपर हुई है। रजस् पर. तमस् का अधिक प्रभाव होने से; अपने वर्तमान स्थूल रूप को छोड़कर सृष्टि अपने कारण अहंकार और पाँचों तन्मात्राओं में, क्रम से लीन हो जाती है। उसके उस प्रकार से लीन हो जाने का ही नाम प्रलय है। तम पर रज का अधिक प्रभाव हो जाने से, तत्वों के विकृति रूप में प्रकट हो जाने का ही नाम सृष्टि है। इस प्रकार से सृष्टि बनती और विनसती रहती है। मित्र ! सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय का यह क्रम अनादि काल से चलता आ रहा है। और लगता है चलता ही रहेगा।

आगे के सूत्र में सृष्टि के भेद सुनिए :—

अध्यात्ममधि भूतमधि दैवं च ॥ ७ ॥

आध्यात्म, अधिभूत और अधि दैव, (ये तीन सृष्टि के भेद हैं।)

प्यारे मित्र ! सृष्टि के संबंध से, हमें अध्यात्म अधिभूत और अधि दैव—ये तीन प्रकार के सुख-दुःख प्राप्त होते हैं।

आध्यात्मिक सुख-दुःख, शारीरिक और मानसिक, दो प्रकार के हैं। शरीर का गठीला और स्वस्थ होना शारीरिक सुख है। रोगी और कमजोर होना शारीरिक दुःख है। मन का पवित्र और शुद्ध विचारादि का होना, मानसिक सुख है। ईर्ष्या, द्वेष, तृष्णा, शोक, रागादि मानसिक दुःख हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दूसरे प्राणियों से प्राप्त सुख, जैसे गाय से दूध-घी का, घोड़े-हाथी से सवारी का, अधि भौतिक सुख हैं। और सांप, बिच्छू आदि के काटने से होने वाला दुःख अधि भौतिक दुःख है।

आधि दैविक सुख, प्रकाश वृष्टि आदि से प्राप्त होता है और आधि दैविक दुःख—बाढ़ आ जाने, बिजली गिरने आदि से होता है।

प्यारे मित्र! अगले सूत्र में बुद्धि वृत्तियों के भेद सुनिए—

पञ्चाभि वुद्धयः ॥ ८ ॥

बुद्धि की वृत्तियाँ पाँच हैं।

प्यारे मित्र! प्रमाण, विपर्यय, विकल्प निन्द्रा और स्मृति—ये पाँच बुद्धि की वृत्तियाँ हैं! संक्षेप में इनकी व्याख्या इस प्रकार है:—

प्रमाण—याथार्थ ज्ञान को कहते हैं। ये, प्रत्यक्ष अनुमान और आगम, तीन प्रकार के होते हैं।

विपर्यय = मिथ्या ज्ञान को विपर्यय कहते हैं। जैसे रस्सी को सांप समझ लेना।

विकल्प = भेद में अभेद की और अभेद में भेद की प्रतीति विकल्प वृत्ति कहलाती है। जैसे गरम पानी से हाथ जल जाना—यहाँ पानी और अग्नि के भेद (अन्तर) में अभेद की प्रतीति होती है। और कठपुतली में अभेद का ज्ञान होता है।

निन्द्रा = निन्द्रा वृत्ति में अभाव की प्रतीति होती है।

स्मृति = पाँचों वृत्तियों से प्राप्त ज्ञान का स्मरण, स्मृति वृत्ति कहलाती हैं।

प्यारे मित्र! इनका विस्तृत वर्णन पातञ्जल योग प्रकाश के समाधिपाद के सूत्र ५ से ११ तक में हुआ है। आप देख लेवें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अगले सूत्र में ज्ञानेद्रियों के विषय में सुनिए—

पञ्च दृग्योनयः ॥ ९ ॥

पाँच ज्ञान के स्रोत (धारा) हैं।

प्यारे मित्र ! आँख, कान, नाक जीभ और त्वचा—ये पांच, जीव को ज्ञान प्राप्त कराते हैं। इन्हीं के द्वारा वह समस्त ज्ञान प्राप्त करता है। ये ज्ञानेन्द्रिय कहलाते हैं। ये ही पाँच ज्ञान स्रोत कहे गए हैं। अगले सूत्र में, प्राण के विषय में सुनिए—

पञ्च वायवः ॥ १० ॥

वायु (प्राण) पाँच हैं।

प्यारे मित्र ! प्राण, अपान, समान, व्यान, और उदान ये पांच प्रकार की वायु हमारे शरीर में संचरती रहती हैं।

प्राण वायु—का स्थान हृदय है। यह शरीर के ऊपरी भाग में विचरती है।

अपान वायु—का स्थान गुदा है। यह शरीर के निचले भाग में सचरती है।

समान वायु—का निवास स्थान नाभि है। यह हृदय से गुदा तक संचरती है। यह अन्न-जल से बने रस को सारे शरीर में पहुँचाती है।

व्यान वायु—स्थूल व सूक्ष्म, सारी नाड़ियों में खून का संचार करती है।

उदान—कण्ठ वायु, जो गले से निकल कर, सिर पर जाती है।

प्यारे मित्र ! अगले सूत्र में कर्मेन्द्रियों को सुनिए—

पञ्च कर्मात्मानः ॥ ११ ॥

पाँच कर्म की शक्तियाँ हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्यारे मित्र ! हाँथ, पाँव, मुख और मल-मूत्र के दो द्वार—ये पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं।

आगे अविद्या का भेद सुनिए—

पञ्च पर्वा अविद्या ॥ १२ ॥

अविद्या पाँच गाँठ वाली है।

प्यारे मित्र ! अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश—ये अविद्या के ही पाँच भेद हैं। पाञ्जल योग दर्शन में ये ही क्लेश के नाम से कहे गए हैं। इनकी चर्चा साधन-पाद के प्रथम नव सूत्रों में हुई है। आप देख लेवें।

संक्षेप में इनका वर्णन सुनिए :—

अविद्या—जो सत्य नहीं है, उसको सत्य मानना, अविद्या है—जैसे प्राणी देह नहीं है; वरन् आत्मा है। अपने को देह मानना ही अविद्या है। अनित्य में नित्य की, अपवित्रता में पवित्रता की, अनात्मा में आत्म की प्रतीति ही अविद्या है।

अस्मिता = मोह।

राग = जो प्रियकर लगता है, जिससे सुख की प्राप्ति होती है—उसके प्रति राग होता है।

द्वेष = सुख की प्राप्ति में विघ्न डालने वालों के प्रति द्वेष होता है।

अभिनिवेश = भ्रमवश मृत्यु का भय,

हमेशा दहशत में रहना कि कहीं मृत्यु न हो जाय !

प्यारे मित्र ! अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश ही क्रम से, तमस् मोह, महा मोह तामिस्र और अन्ध तामिस्र कहलाते हैं।

आगे अट्ठाईस प्रकार की अशक्तियाँ सुनिए :—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF
दं० नं० ६४८८
वा०वि०पु०

अष्टा विंशतिधा ऽशक्तिः ॥ १३ ॥

अशक्ति अट्ठाईस प्रकार की है।

प्यारे मित्र ! अंधा होना, कान से वहिरा होना, नाक से गंध न मालूम होना, जीभ से स्वाद न आना, त्वचा से स्पर्श का ज्ञान न होना—वाणी से गूंगा होना, हाथों से लूला होना, पैर से लंगड़ा होना, उपस्थ से नपुंसक होना, गुदा से मल बन्ध होना तथा मन से उन्माद होना—ये ग्यारह इन्द्रियों के संवंध से अशक्तियाँ हैं। अगले दो सूत्रों में नव तुष्टियाँ और आठ सिद्धियाँ बतलाई जाएँगी। उनके विपरीत—नव अतुष्टियाँ और आठ असिद्धियाँ दोनों मिलकर साक्षात् बुद्धि के संबंध से १७ अशक्तियाँ हैं।

नवधा तुष्टिः ॥ १४ ॥

तुष्टियाँ नौ प्रकार की हैं।

प्यारे मित्र ! तुष्टि (संतोष) नौ प्रकार की हैं।

यथा—

आत्मा को जानकारी प्राप्त किए बिना बीच में ही संतोष कर साधना को छोड़ वैठना तुष्टि है। यहाँ तुष्टि उसी विशेष अर्थ में व्यवहृत हुयी है।

वाह्य तुष्टि और आध्यात्मिक तुष्टि—ये तुष्टि के मुख्य दो भेद हैं।

वाहरी इन्द्रियों के विषय-शब्द, स्पर्श, रूप (दर्शन) रस और गंध से उपरति (हट जाने) को वाह्य तुष्टि कहते हैं। इनसे उपरति भी निम्नाङ्कित पाँच कारणों से होती है :—

(१) कोई सोचते हैं कि उपर्युक्त विषयों को उपलब्ध करना संभव नहीं है; इससे संतोष कर लेते हैं।

(२) कोई यह सोचते हैं कि विषयों को प्राप्त करने पर भी रक्षा करना असंभव है; इससे संतोष कर लेते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(४) कोई-कोई सोचते हैं कि विषयों की प्राप्ति से तो उसकी आकाँक्षा उत्तरोत्तर बढ़ती ही है। उनसे कभी भी तृप्ति नहीं होती। इससे उसे छोड़ देते हैं।

(३) कोई-कोई विषयों में कुछ-न-कुछ दोष देख कर उसे त्याग कर संतोष कर लेते हैं।

(५) दूसरों को हिंसा के बिना किन्हीं भी इन्द्रिय भोगों की प्राप्ति नहीं होगी। इससे कोई-कोई हिंसा दोष के कारण ही इन्द्रिय भोगों को त्याग देते हैं।

प्यारे मित्र ! आगे आध्यात्मिक तुष्टि के भेदों को सुनिए :—

(१) प्रकृति तुष्टि—आत्मा प्रकृति से भिन्न है। प्रकृति का प्रयोजन आत्मा को भोग और मुक्ति दोनों दिलाना है। अतएव, एक-न-एक दिन प्रकृति मुक्ति दिला ही देगी। इसलिए, कोई-कोई प्रकृति के भरोसे साधना को त्याग देते हैं। यही प्रकृति-तुष्टि कहलाती है।

(२) उपादान तुष्टि—कोई-कोई संन्यास ग्रहण कर लेने भर से ही संतुष्ट हो जाते हैं। सोचते हैं—अब तो मुक्ति मिल ही जाएगी। साधना में ढिलाई कर देते हैं।

(३) काल तुष्टि—कोई-कोई सोचते हैं कि कालान्तर में मुक्ति अवश्य ही मिल जाएगी। उसके लिए, विशेष प्रयत्न की आवश्यकता उन्हें प्रतीत नहीं होती। किन्तु काल (समय) अवनति का भी कारण होता है प्रयत्न करने पर, प्राणी की उत्तरोत्तर अवनति होती जाती है। प्राणी मुक्ति से दूर होता जाता है। मुक्ति के लिए तो उसे प्रयत्न करना ही चाहिए।

(४) भाग्य तुष्टि—कुछ लोग भाग भरोसे बैठ जाते हैं। सोचते हैं—भाग्य में होने पर मुक्ति मिल ही जाएगी। उसके लिए, प्रयास क्या करना ! किन्तु बिना प्रयास किए, मुक्ति नहीं मिलतो।

आगे सिद्धियों के बारे में सुनिए—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अष्टधा सिद्धिः ॥१५॥

आठ सिद्धियाँ हैं।

प्यारे मित्र! नीचे लिखे आठ सिद्धियाँ हैं :—

(१) ऊह सिद्धि = पूर्व जन्म के बलिष्ठ संस्कारों के फल स्वरूप ज्ञान की प्राप्ति।

(२) शब्द सिद्धि = गुरु के उपदेश से ज्ञान की प्राप्ति।

(३) अध्ययन सिद्धि = वेदादि शास्त्रों के अध्ययन से ज्ञान की प्राप्ति।

(४) सुहृत प्राप्ति सिद्धि = संतों के दर्शन, उसको संगति आदि से प्राप्त ज्ञान।

(५) दान सिद्धि = दान के फल स्वरूप प्राप्त ज्ञान।

(६) आध्यात्मिक दुख हान सिद्धि = आध्यात्मिक दुःखों का नाश, और उनसे प्राप्त ज्ञान।

(७) आधि भौतिक दुःख हान सिद्धि = आधि भौतिक-दुःखों का नाश, और उनसे प्राप्त ज्ञान।

(८) आधि दैविक दुःख हान सिद्धि = आधि दैविक दुःखों का नाश, और उनसे प्राप्त ज्ञान।

प्यारे मित्र! इनके विपरीत आठ प्रकार की असिद्धियाँ हैं।

प्यारे मित्र! अगले सूत्र में दस मूल धर्म सुनिए—

दश मौलिकार्याः ॥१६॥

दश मूल भूत धर्म हैं।

प्यारे मित्र! पुरुष (ब्रह्म) और प्रकृति के संयोग से सृष्टि की रचना होती है। पुरुष निरा द्रष्टा है। वह कुछ करता नहीं। सब कुछ प्रकृति करती है। करने में, प्रकृति का अपना कोई प्रयोजन नहीं है। वह दूसरे के लिए करती है। मित्र! प्रकृति तो जड़ है। उसमें चेतना नहीं है। उसमें उपभोग करने की क्षमता नहीं है। वह पुरुष के लिए सृष्टि रचती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एकत्व, अर्थत्व और परार्थ्य—ये तीन धर्म प्रकृति में हैं।

एकत्व—प्रकृति एक है।

अर्थत्व—प्रकृति प्रयोजन वाला है।

परार्थ्य—प्रकृति का प्रयोजन पुरुष और जीव के लिए है। पुरुष के लिए सृष्टि रचती है; और जोव को भोग प्रदान करती है। इस प्रकार से वह परार्थ्य है।

अस्तित्व, संयोग, वियोग और शेष वृत्तित्व—ये चार धर्म पुरुष और प्रकृति दानों में हैं।

अस्तित्व—प्रकृति और पुरुष दोनों में अस्तित्व हैं।

संयोग—प्रकृति और पुरुष दोनों का संयोग (मिलन) होता है जिससे सृष्टि की रचना होती।

वियोग—दोनों विलग होते हैं, जिससे मुक्ति होती है।

शेष वृत्तित्व—प्रलय होने पर दोनों विद्यमान रहते हैं।

प्यारे मित्र! अन्यथा और बहुतत्व पुरुष के धर्म हैं।

अन्यथा = पुरुष जड़ वर्ग से भिन्न रहता है।

वहुतत्व—प्राणियों के अन्तःकरण में वास करने वाला होने से पुरुष अनन्त है।

अकर्तृत्व—पुरुष का ही धर्म है। वह अकर्त्ता है। निरा द्रष्टा है।

प्यारे मित्र! अगले सूत्र में, सृष्टि रचना का प्रयोजन सुनिए—

अनुग्रहः सर्गः ॥१७॥

अनुग्रह (कृपा) सृष्टि है।

प्यारे मित्र! उपर्युक्त प्रकार से प्रकृति जीव को भोग और मुक्ति दिलाने के लिए सृष्टि रचती है। अनुग्रह रूप परार्थ काज करती है। एक जीव को मुक्ति दिलाने के बाद भी प्रकृति का प्रयोजन दूसरे अमुक्त जीवों के लिए वना ही रहता है।

अगले सूत्र में प्राणियों की सृष्टि का वर्णन सुनिए—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चतुर्दश विधो भूत सर्गः ॥१८॥

जीवों की चौदह प्रकार की सृष्टि हैं।

प्यारे मित्र ! वाह्य, प्रजापत्य, ऐन्द्र, दैव, गान्धर्व पित्र्य, विदेह, ये आठ दैव सर्ग (सृष्टि) हैं। जीव अपने कर्मानुसार इन सर्गों में जाता है।

नवां—मानुष-सर्ग (सृष्टि) है। पशु, पत्ती, रेंगने वाले जन्तु, कीट और स्थावर इन पाँचों की तिर्यक सृष्टि है।

तियर्क = पशु, पत्ती आदि जीव)

आगे वध और मोत्त का कारण सुनिए—

त्रिविधो वन्धः ॥१६॥

त्रिविधो मोक्षः ॥२०॥

बंधन और मुक्ति तीन-तीन प्रकार के हैं।

प्यारे मित्र ! (१) स्थूल विषयों एवम् राजसि और तामसि वासनाओं, (२) सूत्तम विषयों तथा (३) साधना से प्राप्त ऐश्वर्य्यों में आसक्ति बनो रहने से जीव बंधन में पड़ता है। जन्म-मरण के चक्र में पड़ा रहता है। ये ही तीन प्रकार के बंधन हैं। इन तीनों से विरक्त होने पर ही जीव मोत्त पाता है।

आगे तीन प्रकार का प्रमाण सुनिए—

त्रिविध प्रमाणम् ॥२१॥

प्रमाण तीन प्रकार के हैं।

कोई भी घटनादि, प्रत्यत्त, अनुमान और आगम (आप्त-वचन) से प्रमाणित होती है।

प्रत्यत्त = आँख से देखी हुयी।

अनुमान = जो किसी चिन्हादि से समझा जाय।

आगम (आप्त वचन) = जिसने प्रत्यक्ष रूप से देखा हो अथवा साक्षात्कार किया हो—उस सत्य वक्ता से सुन कर।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्यारे मित्र ! इनकी व्याख्या पातञ्जल योग प्रकाश के समाधि पाद सूत्र ७ में विस्तार में की गई है। आप देख लेवें।

प्यारे मित्र ! अगले सूत्र में, तत्वों के ज्ञान का फल बता कर, परमर्षि कपिल ग्रंथ की समाप्ति करते हैं—

एतत् सम्यग ज्ञाता कृत कृत्यः स्यात्
न पुनस्ति विधेन दुःखेनाभि भूयते ।।२२।।

तत्त्वों को जानकर जीव कृतार्थ हो जाता है। वह तीनों प्रकार के दुःखों को तर जाता है।

प्यारे मित्र ! सूत्र २ और ३ में बताए गए २४ तत्वों की जानकारी हो जाने पर, जीव सूत्र सात में उल्लेखित आध्यात्मिक, आधि दैविक और आधि भौतिक दुःखों से छुटकारा पा जाता है।

प्यारे मित्र ! सांख्य शास्त्र के प्रवर्त्तक परमर्षि कपिल मुनि द्वारा प्रणित तत्त्व समास की चर्चा समाप्त हुई।

श्वेताश्वतरोपनिषद को समझने के लिए, इसकी जानकारी आवश्यक थी।

मित्र ! आइए, सांख्य के सिद्धान्तों का विवेचन करें—

(१) सांख्य ने पुरुष को अनेक माना है। वह जीव रूप में हर प्राणियों के अन्तःकरण में निवास करता।
(२) सांख्य ने पुरुष विशेष की चर्चा नहीं की है।
(३) सांख्य ने एक प्रकार से प्रकृति को ही जगत् की उत्पत्ति का कारण माना है।

प्यारे मित्र ! इसीलिए, कुछ लोग परमर्षि कपिल मुनि को नास्तिक (ईश्वर को नहीं मानने वाला) मानते हैं।

प्यारे मित्र ! अब विषय प्रसंग पर आवें—

आइए श्वेताश्व तरोपनिषद् एवम् तत्त्व समास में व्यवहृत क्लिष्ट शब्दों के अर्थ जान लेवें—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अव्यक्त = प्रकृति, आत्मा, सूक्ष्म शरीर, अज्ञात।
अज्ञ = ज्ञान शून्य, अनजान।
अक्षर = ब्रह्मा, शिव, विष्णु।
अनात्मा = आत्मा से भिन्न वस्तु।
अधिष्ठान = रहने का स्थान।
अधिष्ठित = नियुक्त करना।
अधिष्ठिता = नियुक्त करने वाला
आप्त काम = तृप्त।
उतकृष्ट = श्रेष्ठ उत्तम।
क्लेश = पीड़ा, वेदना, पातञ्जल योग दर्शन में, अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश ये पाँच प्रकार के क्लेश कहे गए हैं।
गिरिशांत = गिरि (पर्वत) में रहकर, सुख का विस्तार करने वाले।
चेतन = जीव, आत्मा, मनुष्य, प्राणी, जीवधारी।
तिर्यक = पशु, पक्षी आदि जीव।
द्योतन = प्रकाशन, दीप, दीया, दिग्दर्शन।
द्योतनात्मक महिमा = प्रकाश करने वाली महिमा।
नित्य = शाश्वत, सतत, सागर, समुद्र।
निष्पन्न = जो समाप्त या पूरा हो चुका है।
नियमन = नियम बद्ध करने का कार्य।
मण्ड = अन्न आदि का रस, सार दही का पानी, मेढ़क।
प्रधान = प्रकृति, परमात्मा।
प्रजापति = सृष्टि करता ब्रह्मा, महीपाल, राजा, इन्द्र सूर्य।
मह द्यश = बड़े यश वाला।
ब्रह्मविद = ब्रह्म को जानने वाला, वेद का अर्थ समझने वाला।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भूत = मूल दव्य, जो सृष्टि के मुख्य उपकरण हैं, जिनकी सहायता से सम्पूर्ण सृष्टि की रचना हुई।

व्यक्त = सांख्य मत से प्रकृति का स्थूल परिमाण, स्प्ट प्रकट।

वेद्य = जानने योग्य।

बह्मवेत्ता = ब्रह्म को जानने वाला।

विश्वकर्मा = सम्पूर्ण संसार की रचना करने वाला, ईश्वर, सूर्य शिव, बढ़ई।

समास = संग्रह, समाहार, संक्षेप समर्थन, दो या अधिक पदों को मिला कर एक बनाना।

सर्ग = सृष्टि की उत्पत्ति।

शिव = मंगल, आनन्द, कल्याण, महादेव; ईश्वर, महेश्वर,

हवि = वह द्रव्य जिसकी आहुति अग्नि में दी जाय।

हंस = एक प्रकार का यति जो ब्रह्मचर्य से रहता है और प्रतिग्रह को स्वीकार नहीं करता। एक प्रकार का जलचर पक्षी।

प्यारे मित्र! पत्र बहुत लम्बा होता जा रहा है। एक साथ पड़ने में आपको कष्ट होगा। अब विदा लेता हूँ। श्वेताश्वतरोषनिषद् की चर्चा, अगले पत्र में होगी।

आप पढ़े विषयों को मनन करते जायँ। जीवन में उतारते जायँ। साधना पथ प॰ बढ़ते जायँ! बढ़ते जायँ!! न विलमें, न पीछे मुड़कर देखें। आपकी साधना फलवती होकर रहेगी। मुक्ति मिलकर रहेगी। मित्र! इसी जन्म में। निश्चय ही इसी जन्म में।

मेरी सद्भावनाएँ सदा आपके साथ रही हैं और आगे भी रहेंगी। सदा आपके मंगल की कामना करता रहा हूँ। आगे भी करता रहूँगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चाहे जहाँ भी रहूँ, जिस भी परिस्थिति में रहूँ; आपकी मधुर स्मृति बनी रहती है। और बनी ही रहेगी।

मेरे प्यारे मित्र। निश्चय ही हम दोनों के पूर्व जन्म के अच्छे संस्कार उदय हुए हैं। तभी तो प्रभु-चिन्तन में लौ लगा है। लगता है—लगा ही रहेगा। अवश्य ही बेड़ा पार हो जायेगा।

भगवान आपको सदा सुखी रखें।

आपका आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय १

प्यारे मित्र, **जमशेदपुर**

सादर प्रणाम ! **२५-८-६९**

प्रथम पत्र में आपका परिचय श्वेताश्वतरोपनिषद् और इसके वक्ता ऋषि श्वेताश्वतर से करा चुका हूँ। द्वितीय पत्र में, परमर्षि कपिल से भी मिला चुका हूँ। उनके द्वारा प्रणित तत्व समास की चर्चा भी हो चुकी है। कुछ क्लिष्ट शब्दों के अर्थ भी लिखे जा चुके हैं। इस प्रकार से श्वेताश्वतरोपनिषद् की चर्चा करने की सारी तैयारी हो चुकी है। फिर आइए चर्चा शुरू करें !

प्यारे मित्र ! इस उपनिषद को समझने के लिए आइए, नगर से सघन वन, ऋषि श्वेताश्तर के आश्रम में चल चलें। कुछ दिन वहीं रहें। और उनकी शिष्य मंडली के साथ बैठकर, ब्रह्म विद्या की चर्चा श्रवण करें।

प्यारे मित्र ! कम से कम, इनकी चर्चा-भर आश्रम-वासियों-सा पवित्र जीवन बितावें। शुद्ध सात्विक भोजन करें। आहार-विहार में संतुलन रखें। शांत वातावरण में, शांत रहकर, सुनें, गुनें और मनन करें। मित्र ! तभी ब्रह्म-तत्व को समझ सकेंगे, तभी प्रभु को जान सकेंगे, तभी उन्हें पा सकेंगे।

प्यारे मित्र ! प्रभु को पहचानने के लिए, बुद्धि की प्रखरता से ज्यादा इसकी शुद्धता और हृदय की पवित्रता की आवश्यकता होती है।

प्यारे मित्र ! आज से हजारों वर्ष पहले की बात है, कुछ विरक्त सन्यासियों को ब्रह्म को जानने की प्रबल इच्छा हुई। उनके मन में विचार उठे और वे निम्न प्रकार से परस्पर विचारने लगे—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जगत की उत्पत्ति का कारण, वह ब्रह्म कैसा है? उसका लक्षण क्या है? हम सब किससे उत्पन्न हुए हैं? किससे जीवन धारण करते हैं? कहाँ स्थित हैं? हे ब्रह्म विद् गण! (ब्रह्म को जानने वालों।) हम किसकी प्रेरणा से सुख-दुःख भोगते हुए जीवन धारण किए रहते हैं?

प्यारे मित्र! संन्यासी, आगे विचारते हैं :—

अथवा जगत की उत्पत्ति का कारण ब्रह्म नहीं है, वरन् काल, स्वभाव, नियति यदृच्छा भूत या पुरुष है। अथवा ये सब मिलकर जगत की उत्पत्ति के कारण हैं; यह विचारना चाहिए। फिर कहते हैं—काल, स्वभाव नियति आदि जगत की उत्पत्ति का कारण नहीं हो सकते—क्योंकि ये आत्मा के अधीन हैं। आत्मा सुख-दु:ख का भोक्ता है। वह स्वयम् स्वतंत्र नहीं है, फिर जगत की उत्पत्ति का कारण कैसे हो सकेगा! उसमें तो जगत को उत्पन्न करने की शक्ति ही नहीं है।

प्यारे मित्र! काल, स्वभाव, नियति, यदृच्छा और भूत शंकर भाष्य के अनुसार निम्नाङ्कित अर्थ में व्यवहृत हुए हैं :—

काल—जो संपूर्ण भूतों (मूल द्रव्य जिनकी सहायता से सृष्टि की रचना होती है) की रूपान्तर की प्राप्ति में जो हेतु (कारण) है, उसे काल कहते हैं।

स्वभाव—पदार्थों की नियत (नियम द्वारा स्थिर की हुई) शक्ति का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नाम स्वभाव है। जैसे अग्नि का स्वभाव उष्णता है।

नियति—पूर्व कृत कर्मों के निश्चित परिणाम, जिनका फल कभी विपरीत नहीं होता, नियति कहलाता है।

यदृच्छा—आकस्मिक घटना। इसका शब्दार्थ है—केवल इच्छा के अनुसार व्यवहार, आकस्मिक संयोग।

भूत—मूल द्रव्य जो सृष्टि के मुख्य उपकरण हैं, जिनकी सहायता से संपूर्ण सृष्टि की रचना हुई है।

जगत की उत्पत्ति का कारण कहीं भूत (मूल दृव्य) तो नहीं है; से तात्पर्य है कि ऐसा तो न हुआ कि जगत के निर्माण के सारे भूत (द्रव्य) अकस्मात मिल गए और सृष्टि आप से आप बन गई।

पुरुष—सांख्य योग के अनुसार प्राणियों की आत्मा।

प्यारे मित्र ! अब विषय प्रसंग पर आवें—

उपर्युक्त प्रकार से ब्रह्म विद सन्यासी विचारते हैं। सृष्टि कैसे बनी (किसने बनाया ? ब्रह्म कौन है ? कैसा है ? जोव, धरती पर कहाँ से टपक पड़ा ? वह सुख-दुख सहते कैसे जीता रहता है ? आदि गूढ़ आध्यात्मिक तत्वों पर तर्क-वितर्क करते हैं किन्तु किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँचते हैं। तब वे समिधा (यज्ञ में जलाने को लकड़ी) लेकर विनीत भाव से महर्षि श्वेताश्वतर के आश्रम पधारते हैं। उन्हें सविनय प्रणाम कर, जिज्ञासाभरी वाणी में ब्रह्म-ज्ञान का उपदेश देने के लिए विनती करते हैं। महर्षि उन्हें ब्रह्मज्ञान के लिए उत्तम अधिकारी पाकर उपदेश देते हैं।

प्यारे मित्र ! महर्षि श्वेताश्वतर कहते हैं :—"हे ब्रह्म ज्ञान के जिज्ञासु प्यारे सन्यासियों। तर्क-वितर्क से ब्रह्म को न जान सकोगे। ध्यान के द्वारा उन्हें पा सकोगे। समाधिस्थ हो, उनका साक्षात्कार करो।"

प्यारे मित्र ! सन्यासियों ने वैसा ही किया। ध्यान लगाकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ब्रह्म के दर्शन कर, कृत्य-कृत्य हो गए। सो सब आगे के श्लोक में सुनिए—

तब संयासियों ने समाधिस्थ हो (ध्यान लगाकर), उस ब्रह्म की शक्ति का साक्षातकार किया, जो उपर्युक्त-काल, स्वभाव, नियति, यद्दच्छा, भूत और पुरुष सबका अकेला ही अधिष्ठान (आश्रय) है।

प्यारे मित्र? उन्होंने उस ब्रह्म को देखा, जो अकेला ही, समस्त कार्य वर्ग का आधार है, जो सत्व रज और तम रूप प्रकृति के तीन गुणों से घिरा है; पाँच भूत ग्यारह इन्द्रियाँ, जिसकी विस्तार और समाप्ति हैं; अविद्या, अशक्ति, तुष्टि और सिद्धि नामक पचास प्रत्यय भेद, जिसके अरों के समान हैं; जो बीस प्रत्यरों-दस इन्द्रियों और उनके विषय, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, बचन, आदान (ग्रहण), गति, त्याग और आनन्द-से युक्त हैं, जो धर्म, अधर्म और ज्ञान रूप तीन मार्ग वाला है एवम् जो विश्वरूप एक पाश वाला है।

प्यारे मित्र! यहाँ ब्रह्म का चक्ररूप में वर्णन हुआ है। एक नेमि, तीन वृत, सोलह अन्त, पचास अरें, बीस प्रत्य अरें (वि अरें जो मुख्य अरों में मजबूती के लिए लगाए जातें हैं), छह अष्टकें, एक पाश, तीन मार्ग आदि ब्रह्म के विशेषण रूप में व्यवहृत हुए हैं।

मित्र! इनमें उलझे रहने के बजाय आगे बढ़ चलिए। आगे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का विषय बड़ा ही रोचक है। बड़ा आनन्द आयेगा। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

एक नेमि = संपूर्ण कार्य वर्ग का आधार।
तीन वृत = सत्व रज और तम प्रकृति के तीन गुणों से घिरे हुए।
सोलह अन्त = पाँच भूत (द्रव्य तत्व) और ग्यारह इन्द्रियाँ जिसके अन्त अवसान है।

प्यारे मित्र ! तत्व समास के सूत्र १२ में अविद्या की; सूत्र १३ में अशक्तियों की, सूत्र १४ में तुष्टियों की और सूत्र १५ में सिद्धियों की चर्चा हुई है।

छह अष्टक निम्नांङ्कित हैं :—

(१) गीतोक्त प्रकृत्यष्टक (२) धात्वष्टक (३) ऐश्वर्याष्टक (४) भावाष्टक (५) देवाष्टक और (६) गुणाष्टक।

प्यारे मित्र ! इनके भी निम्नांङ्कित उपभेद हैं—

गीतोक्त प्रकृत्यष्टक = पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार।

धात्वष्टक = त्वचा चर्म, मांस रुधिर, भेद, अस्ति, मज्जा और शुक्र।
ऐश्वर्याष्टक = अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य ईशित्व और वशित्व ये आठ हैं।
भावाष्टक = धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्य, अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्य।
देवाष्टक = ब्रह्म, प्रजापति, देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, पितृगण, और पिशाच।

गुणाष्टक = दया, क्षमा, निन्दा न करनी, शौच, मंगल, अकृपणता और अस्पृहा।

अब विषय प्रसंग पर आवें —

प्यारे मित्र ! पहले जिस ब्रह्म को चक्ररूप में दिखलाया गया;

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उसे ही अब नदी रूप में दिखलाया जा रहा है। महर्षि श्वेताश्वतर आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! जिसमें, पांच धारा रुप चक्षु आदि ज्ञानेन्द्रियाँ हैं; पाँच कर्मेन्द्रियाँ जिसकी टेढ़ी-मेढ़ी तरंगे हैं; चक्षु आदि पाँचों ज्ञानेन्द्रियों से होने वाली पाँचों बुद्धि का मूल मन है, शब्दादि पाँच विषय भँवर रूप हैं जिनमें प्राणी डूब जाते हैं; गर्भ दुःख, जन्म दुःख, जरा दुःखव्याधि दुःख और मरण दुःख—ये पाँच जिसके जल राशि के धारा हैं; तथा अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश—ये पाँच क्लेश ही जिसके पाँच पर्व (उदगम स्थान) हैं; उस पांच भेदों वाली संसार नदी यानी ब्रह्म को हम जानते हैं।

५

वत्स ! जीव जब तक अपने को परमात्मा से भिन्न समझता है, तब तक जन्म-मरण के चक्र में पड़ा, भटकता रहता है। वही जब अपने को ब्रह्म से अभिन्न ब्रह्म ही समझता है, तब जन्म-मरण तर जाता है। और ब्रह्म में मिल ब्रह्म हो जाता है।

६

वत्स ! वह ब्रह्म जगत प्रपंच से परे और सर्वोत्तम है। भोगने वाला, भोग्य वस्तु एवम् प्रेरणा करने वाला—तीनों एक उसमें ही निहित हैं। अर्थात् उससे परे कुछ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नहीं है। वह सबका उत्तम आश्रय स्थान है। वह अविनाशी है। उसके सिवा सभी चलायमान और विनाशी हैं। ब्रह्म के जिज्ञासु समाधिस्थ हो, ब्रह्म का साक्षात्कार कर, ब्रह्म में मिल ब्रह्म हो जाते हैं। वे जन्म-मरण को तर जाते हैं।

७

प्यारे मित्र ! ऋषि श्वेताश्वतर ध्यान द्वारा मुक्ति का मार्ग बतलाते जा रहे हैं। कहते हैं :—

समस्त भूत (प्राकृत विकार) क्षर यानी विनाशी हैं : और प्रकृति (ईश्वर की माया) अक्षर यानी अविनाशी है। ब्रह्म इन दोनों से परे है। ब्रह्म क्षर-अक्षर व्यक्त (प्रकृति का स्थूल परिमाण) और अव्यक्त (सूक्ष्म शरीर) विश्व का पोषणकर्ता है। माया के वशीभूत हो जीव भोक्ता (भोगने वाला) होने के कारण, बँधा रहता है। और ब्रह्म का ज्ञान होने पर, बंधन से मुक्त हो जाता है। मुक्ति पा लेता है।

८

प्यारे संन्यासियो ! ईश्वर सब कुछ जानने वाला है। और जीव कुछ भी नहीं जानने वाला—ज्ञान-शून्य है। ईश्वर सर्वशक्तिमान है। जीव असमर्थ है। दोनों अजन्मा हैं। एक मात्र प्रकृति ही, जीव को भोग प्रदान

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करती है। आत्मा विश्वरूप और अकर्त्ता है। जिस समय जीव आत्मा, प्रकृति और ईश्वर को एक ब्रह्म रूप समझता है, उस समय वह कृत्य-कृत्य हो जीवन-मुक्त हो जाता है।

९

प्यारे संन्यासियो ! प्रकृति विनाशी है। जीवात्मा अविनाशी है। परमेश्वर इन दोनों पर शासन करता है। इन्हें नियमित रूप से बरताता है। उस परमेश्वर का चिन्तन करने से एवम् उसके साथ आत्मा का संयोग करने से, जीव सुख-दुख, मोह-माया समस्त सांसारिक प्रपंचों से मुक्त हो जाता है।

१०

प्यारे संन्यासियो ! अपने आप को ब्रह्म हो जाने का भान हो जाने पर, जीवधारी के अविद्यादि क्लेशों का नाश हो जाता है। क्लेशों के नाश हो जाने पर, जब वह साधना में आगे बढ़, समाहित होता है तब उसे अतुलनीय ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। उन्हें वह मुक्ति-मार्ग का बाधक समझकर त्यागता है; और सब तरह से तृप्त होकर, साधना में लगे रह निर्वाण प्राप्त करता है।

११

प्यारे मित्र ! आइए, ज्ञान मार्ग और ध्यान मार्ग का विवेचन कर लें। दोनों का अंतिम फल मुक्ति ही है। किन्तु अंतिम फल मुक्ति प्राप्ति के पहले ध्यान मार्ग में, अनेकों ऐश्वर्यों की प्राप्ति होती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

साधक उन्हें त्यागते, आगे बढ़ ब्रह्म को प्राप्त करता है। ज्ञान मार्ग में साधक को जैसे ही अपने आपको ब्रह्म होने का आभास मिल जाता है, वह जीवन मुक्त हो जाता है।

अब विषय प्रसंग पर आवें :—

महर्षि श्वेताश्वतर आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! वह ब्रह्म अपने हृदय में ही विराजमान है। उसे अन्यत्र ढूंढ़ने की आवश्यकता नहीं है। हमें उसे जानना चाहिए। उससे बढ़कर जानने योग्य और कुछ नहीं है। वही जीव है, वही जगत है और वही प्रेरक है। बस एक मात्र ब्रह्म ही सब कुछ है।

१२

प्यारे संन्यासियो ! काठ में अग्नि वर्तमान रहती है किन्तु दिखलाई नहीं पड़ती। फिर भी काष्ठ में अग्नि के सूक्ष्म रूप का क्षय नहीं होता। दो काठों के घिसने पर वह अग्नि प्रकट हो जाती है। मित्र ! आत्मा भी देह में, काठ में अग्नि की तरह सूक्ष्म रूप में रहती है। ओंकार के जपादि से जब चित्त निर्मल होता है—तभी; आत्मा का आभास मिलता है।

१३

प्यारे मित्र ! किस प्रकार आत्मा का साक्षात्कार करें ?—सो सुनिए—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ऋषि श्वेताश्वतर आगे बोले—

अग्नि, दो लकड़ियों के घिसने से पैदा होती है। श्रुति कहती है कि जीवधारी अपनी देह की दो काठों में नीचे वाला काठ समझे और ओंकार को ऊपर वाला काठ और ध्यान रूप घर्षण से आत्मा का आभास प्राप्त करे।

१४

प्यारे मित्र ! कहने का तात्पर्य है कि शरीर-आत्मा की जानकारी का साधन है। उससे काम लें और ध्यान योग का अवलम्बन कर, आत्मा का साक्षात्कार करें।

प्यारे संन्यासियो ! प्रयास करने पर, जिस प्रकार तिलों में तेल, दही में घी, स्रोतों में जल और काठों में छिपी अग्नि दिखाई पड़ती है; उसी प्रकार, निरंतर के सत्य और तप के अभ्यास से हृदयस्थ आत्मा दिखलाई देती है। अर्थात् अपना आभास कराती है।

१५

प्यारे संन्यासियो ! जो आत्मा, आत्मविद्या और तप का मूल है; एवम् जिसमें सब कुछ आश्रित है, उस सर्व व्यापी आत्मा को, दूध में घी के समान जानिए। अर्थात् जैसे दूध में घी मिश्रित रहता है लेकिन दिखलाई नहीं पड़ता; दही जमा कर, महने पर ही घी दीख पड़ता है; वैसे ही आत्मा हृदय में ही है; लेकिन बिना प्रयत्न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किए दीख नहीं पड़ती। स्मृति कहती है कि लोक हित, सदा सत्य भाषण और मन तथा इन्द्रियों की एकाग्रता-रूप तप से, जब काया निर्मल हो जाती है, तब अपने आपको आत्मा होने का भान हो जाता है।

१६

प्यारे मित्र ! अध्याय एक की चर्चा समाप्त हुई। अगले पत्र में अध्याय दो की चर्चा की जायगी। पढ़े विषयों को मनन करें और जीवन में उतारने का भरसक प्रयास करें।

अब बिदा लेता हूँ। अनन्त शुभकामनाओं के साथ आप को पुनः प्रणाम।

आपका आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय २

प्रिय मित्र ! जमशेदपुर

सादर प्रणाम, २६-८-६९

पिछले पत्र में अध्याय एक की चर्चा समाप्त हो चुकी है। अध्याय दो की आरम्भ की जाती है।

मित्र ! अध्याय एक में परमात्मा के साक्षात्कार का साधन, ध्यान बतलाया गया है। अध्याय दो में ध्यान की सिद्धि के साधन बतलाए जाते हैं। सो दत्तचित हो सुनिए—महर्षि श्वेताश्वर अपने शिष्य संन्यासियों से आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! सर्वप्रथम ध्यान मार्ग का साधक, जिस सूर्य भगवान की कृपा से योग की सिद्धि होती है, उससे विनती करता है। कहता है,—"हे सूर्य भगवान ! मैं परमात्मा के साक्षात्कार के लिए साधना में प्रवृत्त हुआ हूँ। मेरे मन और इन्द्रियों को बाह्य विषयों से रोक कर, परमात्मा में लगावें।" १

प्यारे संन्यासियो ! सविता (सूर्य) देवता की अनुकम्पा से ही, मन परमात्मा के चिन्तन में लगता है; फिर ध्यान द्वारा हम परमेश्वर के साक्षात्कार करने का प्रयास करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मन आदि इन्द्रियों को पूर्णानन्द ब्रह्म की ओर जाने में, ब्रह्म ज्योति का प्रकाश पाने में, एवम् मन सहित इन्द्रियों के परमात्मा में अवस्थित होने में, सूर्य देवता सहायता करें। इन्हें शक्ति प्रदान करें।

३

प्यारे संन्यासियो ! जो ब्राह्मण, मन और इन्द्रियों को वाह्य विषयों से हटाकर, आत्मा में लगाते हैं, उन्हें सविता देव की महती स्तुति करनी चाहिए।

४

प्यारे मित्र ! आगे महर्षि श्वेताश्वत प्रार्थना करते हैं। कहते हैं—"हे इन्द्रियवर्ग और इन्द्रिय-अधिष्ठातृ देवगण ! आप सबों के द्वारा ही ब्रह्म की जानकारी होती है। हम भगवत् भक्ति तथा ध्यान द्वारा मन को ब्रह्म में पिरोते हैं। हमारा स्तुति-पाठ सन्मार्ग में, वर्तमान विद्वान् के समान लोक में फैले। जिन विश्वदेव ने दिव्य धर्मों पर अधिकार कर रखा है—वे हमारी ये प्रार्थना सुनें।"

५

प्यारे संन्यासियो ! परमात्मा के चिन्तन-मनन से, रेचकादि प्राणायाम एवम् यज्ञों के फलस्वरूप सोम की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बहुलता से, अन्तःकरण विशुद्ध होता है। विशुद्ध अन्तः-करण में ही, पवित्र मन का उदय होता है। वही मन ब्रह्म में लग पाता है।

६

प्यारे संन्यासियो ! साधक, सविता देव की अनुज्ञा प्राप्त कर, उस ब्रह्म का सेवन करे। उस ब्रह्म में मन स्थिर करे। इससे कर्मों के बीज नष्ट हो जाएँगे। कर्म बंधन के कारण न बन सकेंगे।

७

प्यारे संन्यासियो ! ध्यान, स्थिर आसन पर बैठ कर, शिर, ग्रीवा और छाती को एक सीध में ऊँचे रखते हुए करे। मन और इन्द्रियों को हृदय में नियंत्रित कर, ब्रह्म का ध्यान करे। साधना-पथ में आने वाले विकट जलधारा रूप विघ्नों को भगवत् भक्ति से पार करे।

८

साधक समान रूप से आहार-विहार करे। त्यागने में अथवा अपनाने में अति न करे। उक्त प्रकार से समान आसन पर निश्चल रूप से बैठकर, नासिका द्वारा श्वास बाहर से भीतर खींचे। भीतर खींचकर, रोक रखे, फिर धीरे-धीरे नासिका द्वारा ही श्वास को बाहर करे।

प्यारे संन्यासियो ! मन बिगड़ैल घोड़े की तरह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। रथ में जोते बिगड़ैल घोड़े को सवार सावधानी से काबू में रखता है। साधक मन को वैसे ही काबू में रखे।

९

जो भूमि समतल हो, पवित्र हो, कंकड़ीली न हो; रेतीली न हो, जहाँ अग्नि-धुँआँ न हों, जो जन-कोलाहल से दूर हो, जो मनोहारी और आँखों को प्रिय हो, ऐसे गुहा आदि निर्जन स्थान में साधक ध्यान करे।

१०

प्यारे संन्यासियो! साधक जैसे-जैसे ध्यान योग में अग्रसर होता है, उसे कुहरा छाया-सा दिखने लगता है, फिर धुँआ-सा लगता है। फिर सूर्यवत् और उसके पश्चात् वायु-सा प्रतीत होता है। फिर वायु में अग्नि की उष्णता मालूम होती है। प्रकाश और दाह मालूम होता है। कभी-कभी आकाश जुगनुओं से जगमगाता दिखता है। कभी-कभी आकाश में बिजुली की तरह तेज वस्तु दिखती है। कभी-कभी आकाश में स्फटिक मणि-सी, तो कभी चन्द्र-सी वस्तु दीखती है। ये सब विलक्षण दृश्य ब्रह्म के दर्शन के पहले दी हैं; जब साधक सिद्धि के छोर तक पहुँचा होता है। इसके बाद ब्रह्म की प्राप्ति होती है।

११

(वास्तव में उपर्युक्त वस्तुएँ कोई रहती नहीं। साधक को यों हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भासती हैं। ये एक तरह से उसकी योग-सिद्धि का पैगाम लाती हैं। इससे साधक को आगे बढ़ने की प्रेरणा मिलती है।)

प्यारे संन्यासियो! पृथ्वी. जल, अग्नि, वायु और आकाश—पाँचों तत्वों से हमारा शरीर बना है। ध्यान योग में, इनमें संयम करने से योगी को इनके गुणों की प्रवृत्ति प्राप्त होती है। पृथ्वी का गुण गन्ध है। योगी को गन्धवती प्रवृत्ति प्राप्त हो जाती है। उसे पृथ्वी से बहुत ही आनन्ददायक गन्ध मिलता है। वैसे ही जल का गुण रस है। योगी को रसवती प्रवृत्ति प्राप्त हो जाती है। उसे बहुत ही सुमधुर रस जल में ही मिलता है। वैसे ही अन्य भूतों के गुण भी उसे प्राप्त हो जाते हैं। उस योगी के शरीर के समस्त विकार योगाग्नि में भस्म हो जाते हैं। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश,—इन पांचों भूतों पर उसका अधिकार हो जाता है। फिर उसे रोग नहीं होता। जरा नहीं आती। उसकी अकाल मृत्यु नहीं होती।

प्यारे संन्यासियो! उस योगी का शरीर हल्का हो जाता है। बिल्कुल स्वस्थ हो जाता है। विषय वासनाओं से उसका मन विरक्त हो जाता है। शरीर में कान्ति आ जाती है। स्वर में मधुरता आ जाती है। उसकी बोली कानों को प्रिय लगने लगती है। उसकी देह में सुगन्ध आ जाती है। मल-मूत्र में कमी हो जाती है।

१२-१३

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सोने-चाँदी के टुकड़े मिट्टी लगे रहने से मलिन हो जाते हैं। अग्नि में तपाने से पुनः चमकने लगते हैं। वैसे ही हमारा शरीर व अन्तःकरण भी योगाभ्यास के अभाव में मलिन हुए रहते हैं। योग का अभ्यास कर, आत्म-तत्व का साक्षात्कार कर लेने पर, उनकी मलिनता दूर हो जाती है। वे तपाए सोने-चाँदी के टुकड़े की तरह चमक उठते हैं। उनमें विलक्षण कान्ति आ जाती है। फिर तो योगी कृत्य-कृत्य हो, शोक रहित हो जाता है।

१४

जब योगी को अजन्मा, विशुद्ध, निराकार, प्रकाश-पुंज ब्रह्म का आभास मिल जाता है; यानी जब उसके दिल में स्वयम् ब्रह्म होने की प्रतीति अटल हो जाती है; तब वह जगत-जाल से मुक्त हो जाता है। तब उसे सांसारिक प्रपंच नहीं छू पाते। उसके अविद्यादि सभी क्लेश भी निर्मूल हो जाते हैं।

१५

प्यारे संन्यासियो! ब्रह्म सब दिशाओं में सर्वत्र, सर्वदा विद्यमान है। यह ब्रह्म ही पुरातन है। यही सब की उत्पत्ति का कारण है। इस ब्रह्म से परे कुछ नहीं है। सब कुछ ब्रह्म का ही विस्तार है।

१६

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जो ब्रह्म अग्नि में है; जो जल में है, जो ओषधि और वनस्पतियों में है; जो समस्त विश्व को व्याप्त रखा है; उस ब्रह्म को बार-बार नमस्कार है।

१७

प्यारे मित्र ! अध्याय दो की भी चर्चा समाप्त हुई। ब्रह्मवादिनों की गोष्टी में शामिल हो, हम भी लाभान्वित हुए। ध्यान योग की विधि संक्षेप में सुनी। महिमा देखी। उन प्राचीन काल के सन्यासियों के साथ ब्रह्म के दर्शन के भागी बने। चलिए हमारे भी भाग खुले।

प्यारे मित्र ! ध्यान योग की चर्चा पातञ्जल-योग प्रकाश में विस्तार में हुई है। आप पढ़ लें।

अगले पत्र में, अध्याय तीन की चर्चा होगी। आइए, ईश वन्दना कर विदा होवें :—

पितु मातु सहायक स्वामि सखा, तुम ही इक नाथ हमारे हौ।
जिनके कछु और अधार नहीं, तिनके तुम्ह ही रखवारे हौ।
सब भाँति सदा सुख दायक हौ' दुख दुर्गुन नासन हारे हौ।
प्रति पाल करौ सिगरे जग को, अति सै करुना उर धारे हौ।
भूलि हैं हम ही तुमको, तुम तो हमरी सुधि नाहिं विसारे हौ।
उपकारन को कछु अंत नहीं, छिन ही छिन जो विस्तारे हो।
महराज महा महिमा तुम्हरी, समझें विरले बुधिवारे हौ।
शुभ शान्ति निकेतन प्रेम निधे ! मन मंदिर के उजियारे हौ।
यहि जीवन के तुम जीवन हौ, इन प्रानन के तुम प्यारे हौ।
तुम सों प्रभु पाय "प्रताप हरि" केहि अब और सहारे हौ।

प्यारे मित्र ! जैसे आग में तपाने से सोने पर पड़े मैल जल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जाते हैं, वैसे ही, प्रार्थना से अन्तःकरण के मल भस्म हो जाते हैं। काया निर्मल हो जाती है। सोने जैसी दमदमाने लगती है।

मेरे प्यारे मित्र ! प्रार्थना करने में, वाणी के साथ मन का मेल रखिएगा। हृदय से प्रभु को पुकारिएगा। दर्शन-भर के ही लिए, बुलाइएगा। कुछ न मांगिएगा ! धन-दौलत, विद्या, नाम यश, ऐश्वर्यादि कुछ न चाहिएगा। मुक्ति के लिए भी न ललचाइएगा। चाहिएगा निरा प्रभु को ही। प्रभु को प्यार कीजिएगा ! प्यार खातिर ही।

मित्र ! जी की सारी बातें तो पत्रों में समायी नहीं जा सकेंगी। जीवन-भर आप से कहते-कहते समाप्त न हो पाएँगी। आपके लिए हृदय में प्यार अगाध है—तो बातें भी बेशुमार हैं। असीम हैं तो ये भी असीमित हैं। मित्र ! न प्यार में कहते-सुनते जी भरता, न देते ! यही तो प्यार की विलक्षणता है।

भगवान करें आप की साधना शीघ्र फलवती हो। ब्रह्म का आभास मिले !

आप को बार-बार अनेक पुनः सप्रेम सादर प्रणाम !

आपका आत्मरूप

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय ३

प्रिय मित्र, जमशेदपुर !

सादर प्रणाम ! २७-८-६९

पिछले पत्र में अध्याय दो की चर्चा हो चुकी है। आज अध्याय तीन की करनी है।

अध्याय एक में ब्रह्मवादी ऋषियों के मन में ब्रह्म के स्वरूपादि के विषय में भिन्न-भिन्न विचार उठते हैं। उनका समाधान वे आपस की वार्ता में करने का प्रयास करते हैं। नहीं कर पाते, तो ऋषि श्वेताश्वतर के पास जाते हैं। उनसे उपदेश लेते हैं। वे ब्रह्म के साक्षात्कार का साधन, ध्यान योग बतलाते हैं। फिर अध्याय दो में ऋषि ध्यान योग की विधि बतलाते हैं।

किस प्रकार से परमात्मा शासक और शासनीय यानी राजा और प्रजा दोनों-सा स्वयम् बरतता है? सो अध्याय तीन में महर्षि श्वेताश्वतर की वाणी में ही सुनिए—

महर्षि आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! ब्रह्म सर्वशक्तिमान है। वह भारी जालवान (मायावी) भी है। उसकी माया जानी नहीं जा सकती। वह अपनी अदभुत् शक्तियों द्वारा अकेला ही समस्त लोकों पर, उनकी उत्पत्ति के समय से शासन करता है। उसके शासन में सब कुछ आप से आप नियमित रूप में चलते हैं जो उस ब्रह्म को जानते हैं, वे आत्मदर्शी अमर हो जाते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्यारे संन्यासियो ! ब्रह्म एक ही है । वही देवों का देव है । इसलिए आत्मदर्शी उस एक ब्रह्म के सिवा दूसरे की खोज नहीं करते । अन्य की आशा नहीं रखते । वह ब्रह्म सब जीवों के भीतर स्थित है । प्रेरणा द्वारा सब से अपनी आज्ञा पालन कराता है । अपनी शक्तियों द्वारा लोकों पर शासन करता है । अकेला ही ब्रह्म संपूर्ण लोकों को रचता है; और प्रलय काल में उन्हें समेट भी लेता है ।

२

विश्व भर में उसके नेत्र हैं, विश्व में उसके मुख हैं । विश्व में उसकी भुजाएँ और पैर हैं । ऐसा वह अवर्णनीय ब्रह्म जब द्युलोक (स्वर्ग लोक) और पृथ्वी रचता है—तब जीवों को दो भुजाओं, दो पैरों एवम् पंखों से युक्त करता है ।

३

रुद्र ही विश्व का स्वामी है ! वही देवताओं को भी उत्पन्न करने वाला, पुरातन पुरुष है । वही सर्वज्ञ है । वही ब्रह्म हमें शुभ बुद्धि देवे ! परम पद प्राप्त करावे !!

४

परमेश्वर अपनी मंगलमयी शांत एवं पुण्य प्रकाशिनी मूर्ति से हमारी ओर देखें । हमारा कल्याण करें । उनकी उस मंगलकारी मूर्ति के दर्शन मात्र से ही हम तर जाएंगे ।

५

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्यारे मित्र ! आगे महर्षि श्वेताश्तर ब्रह्म से याचना करते हैं। कहते हैं :—

हे गिरि शांत ! ब्रह्म जीवों के संहार के लिए जो वाण धारण करते हो, उसे न चलाओ। किसी भी जीव की हिंसा न करो। जग का मंगल करो !

६

प्यारे मित्र ! यहाँ साकार ब्रह्म की कल्पना कर प्रार्थना की जा रही है। साधना के प्रारम्भ में साकार ब्रह्म की कल्पना आवश्यक होती है। निराकार की कल्पना सहज में हो नहीं पाती।

प्यारे मित्र ! ऋषि श्वेताश्वर शिष्यों से आगे गहते हैं—

ब्रह्म सर्वोत्कृष्ट, सब से श्रेष्ठ है। सब से महान है। वह समस्त जीवधारियों में उनके शरीर के अनुसार सूक्ष्म रूप में छिपा है। वह समस्त विश्व में व्याप्त है; और उसे धारणाकर स्थित है। ऐसे ब्रह्म को जानकर, जीव अमर हो जाते हैं।

७

वह ब्रह्म स्वयम् ज्ञान है। वह प्रकाश स्वरूप है। उसे जानकर, जीव मृत्यु को तर जाता है। उसके निर्वाण का अन्य मार्ग नहीं है। मैं उस ब्रह्म को जानता हूँ।

७

उस ब्रह्म से कोई श्रेष्ठ नहीं है। न कोई उससे बड़ा है, न कोई उससे छोटा। वह अपने-सा आप ही है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समस्त जगत को व्याप्त कर, वह निश्चल भाव से अपनी द्योतनात्मक (प्रकाश करने वाली) महिमा में स्थिर है।

९

प्यारे संन्यासियो ! जगत से परे प्रकृति है। प्रकृति से परे वह ब्रह्म है। वह बिना रूप-रंग का है। वह दुःख से परे है। उस एक ब्रह्म को जानने से जीव अमर हो जाता है। जन्म-मरण को तर जाता है। जो जीव उसे नहीं जानता, वह जन्म-मरण के दुःख को नहीं तर पाता।

१०

समस्त मुख, समस्त शिर, समस्त ग्रीवा (गरदन) उस ब्रह्म के ही हैं। वह सब जीवों के अन्तःकरण में विराजमान है। वह सर्वव्यापी है। इस लिए वह सर्वगत (सब जगह जाने वाला) मंगल रूप है।

११

वह ब्रह्म महान है। जगत की उत्पत्ति, स्थिति और संहार में निश्चय ही समर्थ है। वह जीव के शरीर रूपी पुरी में निवास करता है। वह अन्तःकरण को प्रेरित करता रहता है। वह सब का शासक, प्रकाश-स्वरूप अविनाशी है।

१२

प्यारे मित्र ! ब्रह्म अपना आदेश बोलकर या लिखकर नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देता। जिससे जो कराना होता है, उसके अन्तःकरण में वैसी प्रेरणा जगा देता है। प्राणी को प्रेरणावश वही करना पड़ता है। इसीलिए कहा जाता है कि प्राणी न भला करता है और न बुरा करता है। वह वही करता है, जो उससे कराया जाता है।

अब विषय प्रसंग पर आवें—

प्यारे संन्यासियो ! अंगुष्ठमात्र (अंगूठे के बराबर) सूक्ष्म शरीर से वह ब्रह्म सब जीव के हृदय में अन्तरात्मा के रूप में सदा विराजमान रहता है। वह ज्ञानाध्यक्ष है। ज्ञानस्वरूप ही है। वह मन के द्वारा सुरक्षित है। जो इसे जानते हैं; वे अमर हो जाते हैं।

१३

उस ब्रह्म को अनन्त शिर हैं तथा उसे अनन्त चरण हैं। वह सब तरह से पूर्ण है। उसने संसार को लांघकर बाहर-भीतर से व्याप्त कर रखा है। उसका (संसार का) भी अतिक्रमण कर (लांघकर) स्थित है।

१४

जो कुछ अन्न से बढ़ता है; जो कुछ वर्त्तमान है, तथा जो कुछ भूत और भविष्यत है, सब वह पुरुष ब्रह्म ही है। किसी काल में भी उसके परे कुछ नहीं है। वह मुक्ति का स्वामी है। मुक्ति उसकी चेरी है।

१५

प्यारे संन्यासियो ! उस ब्रह्म के सब ओर सर्वत्र हाथ-पाँव हैं। सब ओर सर्वत्र आँख, शिर और मुख हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सर्वत्र उसके कान हैं। वह लोक में सब को व्याप्त कर स्थित है।

१६

प्यारे मित्र ! इसलिए भगवान से लुका-छिपाकर, कोई कुछ नहीं कर सकता। वह सब कुछ देखता, सुनता और हृदय में उठी बात को भी जानता रहता है।

अब विषय प्रसंग पर आवें—

ब्रह्म सब इन्द्रियों से व्यापार करता हुआ भी, इन्द्रियों से रहित है। वह तो बिना कान के ही सुनता है। बिना आँख के ही देखता है। वही सब का स्वामी, शासक और सब का आश्रयदाता है।

१७

वह ब्रह्म संपूर्ण स्थावर और जंगम जगत का स्वामी है। नव द्वार वाले शरीर के भीतर स्थित होकर वह जीव रूप में वाह्य विषयों को ग्रहण करने की चेष्टा किया करता है।

१८

प्यारे मित्र ! दो आँख, दो कान, दो नाक-छिद्र, एक मुख—ये सात सिर के और गुदा एवम् लिङ्ग—ये दो निम्न भाग के शरीर के नव द्वार हैं।

महर्षि आगे बोले :—

प्यारे संन्यासियो ! उस ब्रह्म को पाँव नहीं हैं। फिर भी चलता है। हाथ नहीं हैं; फिर भी पकड़ता है। नेत्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नहीं हैं; फिर भी देखता है। उसे कान नहीं हैं; फिर भी सुनता है। जो कुछ जानने योग्य है, सब कुछ जानता है; किन्तु उसको जानने वाला कोई नहीं है। वह सब का आदि (आरम्भ) पूर्ण एवम् महान कहा गया है।

१६

सब जीवों के हृदय में स्थित आत्मा महान् से भी महान् है तथा अणु (छोटा) से भी अणु है। वह (आत्मा) विषय भोग के संकल्प से रहित है। वह महिमान्वित है। हृदयस्थ उस आत्मा को जो भगवत् कृपा से ईश्वर रूप देखता है, वह शोक को तर जाता है।

२०

प्यारे मित्र ! ऋषि श्वेताश्वतर आगे कहते हैं—हे सन्यासियो ! ब्रह्मवेत्ता लोग, जिस ब्रह्म को अजन्मा और नित्य मानते हैं, जिसे जरा नहीं व्यापती, जो पुरातन और सर्वगत है; उस ब्रह्म को मैं जानता हूँ।

२१

प्यारे मित्र ! अध्याय तीन की भी चर्चा समाप्त हुई। अगले पत्र में अध्याय चार की चर्चा की जाएगी।

आइए, ईश-वन्दना कर, विदा होवें—

शरणागत पाल कृपाल प्रभो, हम को इक आस तुम्हारी है।
तुम्हरे सम दूसर और कोउ नहिं दीनन को हितकारी है।
सुधि लेत सदा सब जीवन की अति ही करुना विस्तारी है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रति पाल करे बिन ही बदले अस कौन पिता महतारी है।
जब नाथ दया करि देखत हौ, छुटि जात विथा संसारी है।
बिसराय तुम्हें सुख चाहत जो अस कौन नदान अनारी है।
परवाह तिन्हें नहिं स्वर्गहु की जिनको तव कीरति प्यारी है।
धनि हैं धनि हैं सुखदायक जो तव प्रेम सुधा अधिकारी है।
सब भाँति समर्थ सहायक हौ तव आश्रित बुद्धि हमारी है।
"परताप नारायण" तौ तुम्हरे पद पंकज पै बलिहारी है ।।१।।

मित्र ! आपका तो स्वर सुरीला है। हृदय से ईश-वन्दना अलापिएगा—तो वातावरण गुञ्जा डालिएगा। प्रभु के दर्शन पा जाइएगा। मित्र ! बने तो ध्यान योग का अवलम्बन भी कीजिए। ध्यानस्थ हो प्रभु के दिग्दर्शन कीजिए ! जो बन पड़े वही कीजिए।

मेरी सद्भावनाएँ सदा आपके साथ रही हैं और आगे भी रहेंगी। किन्तु साधना-पथ पर बढ़ना आप को स्वयम् होगा। पुनः सादर सप्रेम प्रणाम !

आपका आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय ४

प्रिय मित्र, जमशेदपुर

सादर प्रणाम ! २७-८-६९

आज दिन का यह दूसरा पत्र है। पिछले पत्र में अध्याय तीन की चर्चा की गई है। अध्याय चार की प्रारम्भ की जाती है।

मित्र ! अध्याय चार में सद्बुद्धि और मुक्ति के लिए परमात्मा की स्तुति की गई है, एवम् ब्रह्म के रूप और महत्व का वर्णन किया गया है। आगे की वार्ता महर्षि श्वेताश्वतर की वाणी में ही सुनिए—

महर्षि आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! अकेला एवं बिना रूप का होते हुए भी, सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा बिना प्रयोजन के ही अपनी योग शक्ति से अनेक वर्ण और रूप धरता है। समस्त स्थावर, जंगम (चलने फिरने वाले) आदि के रूप में प्रकट होता है। प्रलय काल में, विश्व को आप में ही लीन कर लेता है। वह ब्रह्म हमें सद् बुद्धि देवे !

१

विश्व में सब कुछ ब्रह्म का ही विस्तार है। वही अग्नि है। वही सूर्य और चन्द्र है। वही वायु है। वही

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वही शुद्ध है। वही जल है। नक्षत्रादि वही है। प्रजापति भी वही है। ब्रह्म से परे कुछ नहीं है।

प्यारे मित्र ! आगे महर्षि श्वेताश्वतर ब्रह्म की स्तुति करते हैं। कहते हैं—

हे भगवन् ! तू ही स्त्री है। तू ही पुरुष है। तू ही कुमार है। तू ही कुमारी है। तू ही वृद्ध होकर डंडे के सहारे चलता है। तू हो उत्पन्न होने पर अनेक रूप धर लेता है।

३

हे भगवन् ! तू ही नील वर्ण भ्रमर हो। तू ही हरित वर्ण एवम् लाल आँख वाले जीव-जन्तु हो। तू ही मेघ हो। तू ही ग्रीष्मादि ऋतु हो। तू ही समुद्र हो। तेरा ही न आदि है न अन्त है। तू ही सर्वत्र व्याप्त हो। भगवन ! तुझसे ही समस्त लोक उत्पन्न हुए हैं।

४

प्यारे संन्यासियो ! तेज, अप (जल) और अन्न रूपा प्रकृति से समान आकार वाली बहुत-सी प्रजा उत्पन्न होती है। वास्तव में, सब कुछ तो भगवान का ही विस्तार है; और जीवात्मा ब्रह्म रूप है। किन्तु उसे बुरे संस्कारों के कारण, अपने आपको ब्रह्म रूप होने का भान नहीं होता। प्रकृति को ही अपना स्वरूप समझकर,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जीव कर्म पाश में बँधता है। वही अपने स्वरूप को पहचान कर, ब्रह्म रूप हो जाता है।

५

एक वृक्ष पर समान नाम वाले दो सुन्दर पंखी रहते हैं। एक वृक्ष के स्वादिष्ट फलों को चखता है—दूसरा निरा देखता रहता है। जीव और ईश्वर दोनों पक्षियों की तरह देह में साथ-साथ वास करते है। जीव अच्छे-बुरे कर्म फलों को भोगता है। ईश्वर एक मात्र देखता-भर रहता है। उसे कर्म फल नहीं व्यापते।

६

उस एक ही देह में—जीव मोह में पड़कर, शोक करता है। उसे जब अपने असल स्वरूप का ज्ञान हो जाता है, यानी जब उसे आत्मा होने का भान हो जाता है, तब वह दीन-भाव और शोक को तर जाता है।

७

प्यारे संन्यासियो ! उस एक ब्रह्म में सभी देवगण स्थापित हैं। वेदत्रय भी उस ब्रह्म के ही गुण गाते हैं। वेदों के पढ़ने व जानने से क्या लाभ ! जब ब्रह्म को नहीं जाना। जो उस ब्रह्म को जान जाते हैं, वे तो कृतार्थ हो जाते हैं।

८

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वेद, यज्ञ, क्रतु (अश्वमेध यज्ञ), व्रत, भूत, भविष्यत् और वर्तमान तथा वे सब भी जो वेद में वर्णित हैं, सब के सब, उस ब्रह्म से ही उत्पन्न हैं। ईश्वर अपनी माया से उत्पन्न करता है। ईश्वर अंश जीव माया में पड़कर भ्रमवश अपने को अन्य समझता है। इससे जगत-जाल में फंसकर, नाना दुःख झेलता है।

९

प्रभु की माया ही प्रकृति है। प्रभु ही सब माया के प्रेरक और संचालक हैं। वही महान और ईश्वर होने से महेश्वर है। उनकी माया (भ्रम-जाल) से सारा जगत व्याप्त है!

१०

परमेश्वर सारे विश्व को अकेला ही अपने में से ही रचता है। विविध विस्तार करता है। प्रत्येक, योनि को बनाता है। फिर प्रलय काल में सब को समेट लेता है। उस सर्व नियन्ता (सब को बनाने वाले) वरदायक और वन्दनीय ईश्वर का जो साक्षात्कार कर लेता है—वह परम शांति को पा लेता है। जिसे अपने आप को ब्रह्म होने का आभास हो जाता है—वह समस्त क्लेशों को तर जाता है।

११

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रुद्र (ब्रह्म) ही समस्त देवताओं का जन्मदाता है। है। वही ऐश्वर्य दाता है। वही जगत का स्वामी और सर्वज्ञ है। उसके सामने वह ज्योतिर्मय अण्ड, जिससे ब्रह्मा तथा सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति हुई, उत्पन्न हुआ। वह पुरातन पुरुष (ब्रह्म) शुद्ध बुद्धि देवें।

१२

परमेश्वर, ब्रह्मादि समस्त देवताओं का अधिपति है। वही समस्त लोकों को धारण किए स्थित है। सभी लोक उसी में आश्रित हैं। दो पैर वाले मनुष्यादि, चार पैर वाले पशु आदि—समस्त जीवों पर वही शासन करता है। सब उससे ही शासित होते हैं। आनन्द स्वरूप ब्रह्म की हम हवि से पूजा करें। हुमाध करें।

१३

ब्रह्म सूक्ष्म से भी सूक्ष्म है। विराट से भी विराट है जगत का रचयिता है। अनेक रूप धारण किए, संसार को चारों ओर से घेर रखा है। संसार के कण-कण में, वह व्याप्त है, और संसार उस (ब्रह्म) में समाया हुआ है। उस आनन्द स्वरूप भगवान का साक्षात्कार कर शांति प्राप्त करें।

१४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्यारे संन्यासियो ! ब्रह्म ही अतीतकाल में विश्व का रक्षक था। वही विश्व का स्वामी है। वही सभी प्राणियों में स्थित है। सनकादि ब्रह्मर्षि और ब्रह्मादि देवगण, उसी ब्रह्म का साक्षात्कार कर, मुक्ति पा सके हैं। ब्रह्म में मिल चुके हैं। उस ब्रह्म को जानकर, प्राणी जन्म-मरण को तर जाता है।

१५

प्यारे मित्र ! 'मैं ही ब्रह्म हूँ' ऐसा आभास हो जाने पर तो, हम ब्रह्म ही हो जाएँगे। वास्तव में, हम हैं, ब्रह्म ही, किन्तु अज्ञान-वश हम अपने को देह मान बैठे हैं। देह से ही प्रीति करते हैं। आत्मा होने की प्रतीति हमें नहीं हो पाती। इसी से दीन-हीन अवस्था में पड़े रहते हैं। ब्रह्म होकर भी असहाय बने रहते हैं।

प्यारे मित्र ! सतत् साधना द्वारा अपने आपको ब्रह्म होने की प्रतीति स्थिर करें। प्रतीति दृढ़ होते ही, हम जगत-जाल से ऊपर उठ जाएँगे। आनन्द-स्वरूप ब्रह्म में ही विचरने लगेंगे। रोग, दुःख, भयादि से विमुक्त हो जाएँगे। भला ! ब्रह्म रूप आत्मा का कोई क्या बिगाड़ सकता है ! उसे कौन मार सकता है !!

मेरे प्यारे मित्र ! ब्रह्मवादियों में शक्ति प्रचुर होती है। वे तो ब्रह्म की सारी शक्तियों से पूर्ण होते हैं। सुख-दुःख को तो वे शरीर का धर्म मानते हैं। संकट में तो विहँसते हैं।

प्यारे मित्र ! ब्रह्मवादियों को स्त्री-पुरुष में भेद नहीं दिखता ? वे तो हृदयस्थ भगवान को देखते हैं। उनकी दृष्टि हाड़-मांस, मज्जादि से बनी देह पर ही नहीं अटक रहती।

मित्र ! ब्रह्मवादियों की स्थिति का सांगोपाँग वर्णन नहीं कर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पाता। आप भगवान का साक्षात्कार कर, स्वयम् अनुभव कीजिए।

मित्र ! वे दिन आपको याद होंगे, जब मृत्यु का भय आपको सतत सताया करता। थोड़ी सी साधना से ही, वह भय अब कहाँ ! गम की रेखाएँ अब चेहरे पर कहाँ !!

मित्र ! अब तो मुख मण्डल खिला रहता है। उस पर मधुर मुस्कान रहती है। अब तो चैन की वंशी बजती है। गहरी नींद आती है। इतना सब, ब्रह्म की एक मात्र हल्की-सी झाँकी मात्र से। दर्शन कर तो दोनों कृत्य-कृत्य हो जाएँगे।

मेरे प्यारे मित्र ! लगता है, वह भी दिन दूर नहीं, जब हम दोनों ब्रह्म के दर्शन कर पाएँगे। अपने आपको ब्रह्म होने का आभास कर पाएँगे। एकमात्र भगवान पर भरोसा रख साधना-पथ पर बढ़ते जाँय ! बढ़ते जाँय !! भगवत् भक्ति से विघ्न बाधाओं को तरते जाँय ! तरते जाँय !!

प्यारे मित्र ! अब विषय प्रसङ्ग पर आवें :—

महर्षि श्वेताश्वतर आगे बोले—

प्यारे सन्यासियो ! जिस प्रकार घृत का सार भाग घृत वालों को अत्यन्त प्रीतिकर होता है, उसी प्रकार मुक्ति के जिज्ञासुओं को ब्रह्म प्रिय होता है। सब प्राणियों के हृदय में अन्तर्यामी रूप से स्थित, वह ब्रह्म ही विश्व को आनन्द प्रदान करने वाला है। वह स्वयम् ही आनन्द रूप है। उस ब्रह्म का साक्षात्कार कर, जीव समस्त बँधनों से मुक्त हो जाता है।

१६

सर्वव्यापी ब्रह्म ही सारे संसार की रचना करने वाला—विश्वकर्मा है। वह सदैव सब जीवों के हृदय में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विराजमान है। विवेक-बुद्धि और एकत्वज्ञान से उस ब्रह्म का आभास मिल पाता है। उसे जो जान जाते हैं, वे अमर हो जाते हैं। जन्म-मरण को तर जाते हैं।

१७

जब साधक ब्रह्म का साक्षात्कार कर स्वयम् ब्रह्म रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है, तब उसके लिए न दिन रहता, न रात, न सत् न असत्, तब तो उसे सब समय सर्वत्र एक आनन्द स्वरूप ब्रह्म ही दिखता है। वह अविनाशी प्रकाश स्वरूप ब्रह्म सभी प्रकार से भजनीय है। उसी से समस्त परम्परागत ज्ञान का प्रसार हुआ है।

१८

प्यारे मित्र ! सृष्टि की आदि में जो ज्ञान, लोक हित ब्रह्मा को प्राप्त हुआ, वही ब्रह्मवादियों को गुरु प्रसाद से प्राप्त होता आया। मित्र ! यही परम्परागत ज्ञान हुआ। इसकी भी उत्पत्ति ब्रह्म से ही जानिए। प्रसार भी उसी से।

अब विषय प्रसंग पर आवें—

महर्षि श्वेताश्वतर आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! ब्रह्म को न कोई ऊपर से न नीचे से, न इधर न उधर से, न मध्य से ही, आच्छादित कर सकता। उसे न कोई छू सकता न ढक सकता। वह महद्यश (महान यज्ञवाला) कहलाता है। उस ब्रह्म की कोई उपमा भी नहीं है। वह अपने-सा आप ही है।

१९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हृदय में ही विराजमान भगवान हमारे चर्मचक्षुओं द्वारा देखा नहीं जा सकता। उसका आभास तो शुद्ध बुद्धि से ही पाया जा सकता। उस ब्रह्म का आभास, जो पा लेते हैं—वे जन्म-मरण को तर जाते हैं।

२०

प्यारे मित्र ! आगे महर्षि श्वेताश्वतर अपनी शिष्य मंडली में ब्रह्म की स्तुति करते हैं। वे कहते हैं :—

हे रुद्र ! एक तू ही अजन्मा है। तुझे ही जन्म-मरण, जरा-दुःख नहीं व्यापते। जीवधारी तो इन दुःखों से ग्रसित रहता है। उसे सांसारिक क्लेश व्यापते हैं। उन दुःखों के भय से मेरे जैसा परतंत्र जीव तेरी शरण में जाता है। तू उसकी सदा रक्षा करो।

२१

हे रुद्र ! तू कुपित होकर, हमारे पुत्र, पौत्र आयु, गौ और अश्वों को हनन न करना। और, न मेरे वीर सेवकों का ही वध करना। हम तो हवन की सामग्री लिए, सदा तुझे पुकारते ही हैं। तेरा आवाहन करते ही हैं।

२२

प्यारे मित्र ! अध्याय चार को भी चर्चा समाप्त हुई। ब्रह्म का वर्णन भाँति-भाँति से हुआ। वास्तव में, ब्रह्म तो है अवर्णनीय।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मित्र ! श्रुति एक ही बात को बार-बार भाँति-भाँति से कहकर, हमारे हृदय में उसकी छाप डालनी चाहती है। सत् कार्य के लिए, अथक सत् प्रयास करती है। कठिनतम परिश्रम से हृदयग्राही बनाती है।

हम बार-बार पढ़ें। गुनें। हृदय में बैठावें। तभी लाभ होगा।

प्यारे मित्र ! विषय बड़े गूढ़ हैं। चिन्तन-मनन, हृदय की पवित्रता, बुद्धि की विशुद्धतादि से स्पष्ट हो सकेंगे। आप सत् प्रयास करें। आप इस ब्रह्म विद्या के अधिकारी तो हैं ही। मेरी सद्भावनाएँ आपके साथ हैं ही।

मेरे प्यारे मित्र ! उपर्युक्त सकाम प्रार्थना मुझे न भायी-प्रभु से क्या माँगना ! संन्यासियों की मंडली में गृहवासियों की प्रार्थना !

अब विदा लेता हूँ। अगले पत्र में अध्याय ५ की चर्चा करूँगा।

पुनः सादर प्रणाम !

आपका आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय ५

प्रिय मित्र जमशेदपुर

सादर प्रणाम ! २८-८-६९

पिछले पत्र में अध्याय चार की चर्चा हो चुकी है। ब्रह्म का सविस्तार वर्णन हुआ है। अध्याय पाँच की चर्चा प्रारम्भ की जाती है।

मित्र ! अध्याय पाँच में विद्या-अविद्या तथा परमेश्वर के स्वरूप और महात्म्य का वर्णन है; एवम् यह भी बतलाया गया है कि अपने पूर्व कृत कर्मों के अनुसार जीव भिन्न-भिन्न योनियों में जन्मता है।—सो सब महर्षि श्वेतश्वतर की वाणी में ही सुनिए।

महर्षि आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! वह ब्रह्म ब्रह्मा से भी श्रेष्ठ है। उनका भी जन्मदाता है। उस ब्रह्म में विद्या और अविद्या दोनों स्थित हैं। अविद्या ही संसार का कारण है। अज्ञानवश ही हमें संसार भासता है। और विद्या ही अमृत रूप मुक्ति को देने वाली है। ब्रह्म जिसमें विद्या और अविद्या दोनों स्थित हैं—इन दोनों से भिन्न है। उसे ये नहीं व्यापते; वरन् उससे ही शासित होते हैं। १

ब्रह्म संपूर्ण रूप समस्त उत्पत्ति स्थानों को अकेला ही स्थापित करता है। अकेला ही सारी सृष्टि का निय-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मित रूप से संचालन करता है। उस ब्रह्म ने ही कपिल ऋषि (हिरएय गर्भ) को ज्ञान का उपदेश दिया था। उसने उन्हें जन्मते देखा था। इतना वह पुरातन है।

२

प्यारे मित्र ! महर्षि कपिल ही सांख्य दर्शन के प्रवर्त्तक हैं। सांख्यवादी इस श्लोक के आधार पर, परमर्षि कपिल की प्राचीनता और प्रमाणिकता सिद्ध करते हैं एवम् सांख्य सिद्धान्त की पुष्टि करते हैं। किन्तु यहाँ कपिल शब्द का अर्थ हिरएयगर्भ (वह ज्योतिर्मय अएड, जिससे ब्रह्मा एवम् समस्त सृष्टि की उत्पत्ति हुई थी) माना गया है।

प्यारे संन्यासियो ! वह ब्रह्म, विस्तृत सृष्टि रचता है। संहार करता है। पुनः-पुनः उसी भाँति से वह महात्मा ईश्वर रचता है। प्रजापति ब्रह्मादि को उत्पन्न कर, उन पर शासन करता है।

३

ब्रह्म इधर-उधर समस्त दिशाओं को प्रकाशित करता हुआ; स्वयम् देदीप्यमान होता है। जैसे सूर्य जगत को प्रकाशित करने में लगा रहता है—वैसे ही ब्रह्म भी। वह अकेला ही पृथ्वी आदि को नियमित करता है। उन्हें अपने अटल नियमों के अन्तर्गत चलाता है।

४

प्यारे मित्र ! ब्रह्म के नियमों को कोई भी अतिक्रमण नहीं करता। उसके नियम, उसके आदेश—आप से आप पालन होते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जाते हैं। हम देखते हैं; ऋतु निरंतर से एक-सा परिवर्तन होते आ रहे हैं। वृक्षों में नियत समय पर ही, फल-फूल लगते हैं। ब्रह्म अपने आदेशों को स्वभाव में परिणत कर देता है। जैसे अग्नि का स्वभाव उष्णता बना दिया, सो बना ही रहा।

मित्र! भगवान् स्वयम् ही प्रकाश पुञ्ज है। सूर्य भी उसी के प्रकाश से प्रकाशता है।

अब विषय प्रसंग पर आवें—

महर्षि आगे बोले—जगत् का रचयिता ब्रह्म हर वस्तु के स्वभाव को नियमन करता है; जैसे अग्नि का स्वभाव उष्णता उसके ही नियमन से होता है। वही परिणाम योग्य पदार्थों को परिणत करता है! वह अकेला ही संपूर्ण विश्व को नियमबद्ध करता है। वही सत्व रज और तम-तीनों गुणों को उनके कामों में नियुक्त करता है।

५

उस ब्रह्म का स्वरूप वेदों के गूढ़ भाग, उपनिषदों में छिपा है। वेद में वर्णित उस ब्रह्म को ब्रह्मा जानते थे; पुरातन देव और ऋषिगण उसे जानते थे। उस ब्रह्म को जानकर, वे भी ब्रह्म हो गए।

६

प्यारे मित्र! हम भी उस ब्रह्म को जानकर, ब्रह्म हो जाएँगे।

आगे जीवात्मा के स्वरूप का वर्णन सुनिए—जीव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सत्व, रज और तम तीनों गुणों से प्रवाहित होता है। वह फल के लिए कर्म करता है, और किए हुए कर्म का फल भोगता है। वह विविध रूप धरता है। धर्म, अधर्म और ज्ञान, इन तीन मार्गों से चलता है। प्राणों का अधिष्ठाता, जीवात्मा अपने कर्मों के अनुसार बरतता है।

७

जीव अँगूठे के बराबर ज्योति स्वरूप सब जीव-धारियों के हृदय गुहा में विराजमान रहता है। वह बुद्धि के गुण संकल्प और अहंकारादि तथा शरीर के गुण जरादि से सम्पन्न रहता है। उसे ये व्यापते हैं। वह आरे की नोंक के बराबर भी देखा गया है।

८

जीव पहले किसी काम के लिए संकल्प करता है। फिर उसके सम्पादान के लिए, इंद्रियों को लगाता है। फिर स्पर्श होता है। स्पर्श के बाद दर्शन और मोह। इनसे कर्म-संस्कार की उत्पत्ति होती है। जीव संस्कार संचय करता है। और संस्कार के अनुसार अगले जन्मों में स्त्री, पुरुष और नपुंसक का शरीर धारण करता है। जिस प्रकार अन्न और जल से शरीर की वृद्धि होती है; उसी प्रकार कर्म-फलों से जीव की भिन्न-भिन्न योनियों की बढ़ती होती है। ११

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपने किए पाप-पुण्य कर्मों के अर्जित संस्कारों के अनुसार जीव स्थूल, सूक्ष्मादि बहुत-सी देह धारण करता है। उन-उन शरीरों में रहकर, विविध अच्छा-बुरा कर्म करता है ! कर्मानुसार, कर्म-फल और मानसिक संस्कार संचय करता है। इन संस्कारों के फलस्वरूप ही जीव को अगले जन्मों में भिन्न-भिन्न शरीर धारण करना पड़ता है।

१२

प्यारे संन्यासियों ! जो ब्रह्म ऐसे विश्व की सृष्टि करता है, जिसका न आदि है न अन्त है, एवं उसको व्याप्त कर, स्थित है, उस सर्व समर्थ ब्रह्म को जानकर ही, जीव इस विकट संसार में समस्त बंधनों-अविद्या, काम कर्मादि—से मुक्त हो जाता है।

१३

वह ब्रह्म, निराकार रूप से शुद्ध अन्तःकरण से ही ग्रहण करने योग्य है। वही सृष्टि और प्रलय करने वाला है। वह अविद्यादि से परे, शुद्ध आनन्द स्वरूप ही है। वही प्राणादि कलाओं को रचने वाला है। उस ब्रह्म को जानकर ही, जीव शरीर बंधन से मुक्त होता है। तभी जन्म-मरण के चक्र से बच पाता है।

१४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्यारे मित्र ! आयुर्वेद के अनुसार प्राण, श्रद्धा, व्योम, वायु, जल, पृथ्वी, मन, इन्द्रिय, अन्न, वीर्य, तप, कर्म, लोक मानादि—ये शरीर के सोलह कलाएँ हैं।

प्यारे मित्र ! जीवधारी को जब अपने आप को ब्रह्म होने का आभास हो जाता है, यानी जब वह समझ जाता है—कि वही ब्रह्म है, तब वह क्लेशों से विमुक्त हो शुद्ध आनन्द स्वरूप हो जाता है। **मित्र** ! वास्तव में, हम ब्रह्म ही हैं। भ्रनवश अपने को देह मान कर भवसागर में पड़े हैं। जगत जाल में फँसे हैं। हमारे पूर्व कर्मों के संस्कार ही, जी में ब्रह्म होने की प्रतीति होने नहीं देते। साधन द्वारा इन कर्म संस्कारों को दूर करना होगा। अपने अन्तःकरण को विशुद्ध बनाना होगा। कर्म संस्कारों के दाग भी मिटाने होंगे। तभी ब्रह्म होने की प्रतीति अटल रूप से जी में प्रतिष्ठित हो सकेंगी।

मित्र ! ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन होते आया है। वह तो शुद्ध आनन्द स्वरूप है। हम भी वही हैं। वह तो शक्ति स्वरूप है। हम भी वही हैं। नाहक दीन-हीन बने रहते हैं। वह तो जन्म-मरण, जरादि शरीर धर्मों से परे हैं। **मित्र** ! हम भी वही हैं। अविद्यावश ही अपने को देही बूझते हैं। नाना कष्ट झेलते हैं।

प्यारे मित्र ! वही (ब्रह्म ही) सर्वश्रेष्ठ है। वही सर्वोत्तम है। वही ज्ञान है। वही प्रकाश है। वही सब कुछ है। उसके परे कुछ नहीं है। **मित्र** ! हम भी वही हैं। भ्रमवश गढ़हे में पड़े, मोह-माया में फंसे हैं।

वह न स्त्री है न पुरुष है, न बाल है; न युवा है न वृद्ध है। वह तो निराकार, सत् चित्त आनन्द है। **मेरे प्यारे मित्र** ! सच मानिए, मेरी बातों पर विश्वास कीजिए—हम भी वही हैं—जो वह है। व्यर्थ के भूल भुलैया में पड़े हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मेरे प्यारे मित्र ! ब्रह्म रूप जीव, जीव ही है, चाहे उसे शरीर रूपी कोई भी चोंगा पहना दीजिए। मनुष्य के शरीर में डाल, उसे मनुष्य बना दीजिए। स्त्री के शरीर में डाल स्त्री, पुरुष के शरीर में डाल पुरुष। अथवा जीव-जन्तुओं के शरीर में डाल, उसे जीव-जन्तु नाम दे डालिए—कोई अन्तर नहीं पड़ता। हर शरीर में जीव, जीव है। ब्रह्म स्वरूप ही है।

मित्र ! स्पष्ट रूप में ऐसे समझिए—हम भी ब्रह्म, आप भी ब्रह्म, साँप भी ब्रह्म बिच्छू भी ब्रह्म, बाघ भी ब्रह्म, सिंह भी ब्रह्म। मित्र ! यहीं तक नहीं—जिधर देखता हूँ—उधर तू ही तू है।

मित्र ! बहुत कुछ कह डाला है। कहीं आप भ्रम में न पड़ जायँ। कहीं बुद्धि चकराने लग जाय। विषय गहन हैं। निरा समझाने; बताने से जी में बैठने वाले नहीं हैं। ये तो साधना के फलस्वरूप ही ग्रहित होते हैं। प्रेम के आतुरतावश, मैं शीघ्राति शीघ्र आप को बोध कराना चाहता हूँ। प्रेम में पागल मन आपको ब्रह्म का आभास कराना चाहता है और चाहता है चन्द दिनों में ही, कराना आपको यही उपहार देना चाहता है। इससे सर्वोत्तम उपहार और कुछ न जँचता है। मित्र ! आपको सब मालूम ही है—आप के इस प्रेमी के पास असीम प्यार और सद्भावनाओं से बढ़कर और है ही क्या ?

अध्याय पाँच की भी चर्चा समाप्त हुई। अगले पत्र में अध्याय छह की चर्चा की जायगी। अब विदा लेता हूँ। आप को अनन्त शुभकामनाओं के साथ पुनः सादर सप्रेम प्रणाम।

आपका आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्याय ६

प्रिय मित्र, जमशेदपुर

सादर प्रणाम २९-८-६९

पिछले पत्र में अध्याय पाँच की चर्चा हो चुकी है। आज अन्तिम अध्याय छह की करनी है।

अध्याय एक में, परमात्मा के साक्षात्कार का साधन ध्यान बतलाया गया।

अध्याय दो में, ध्यान की विधि बतलाई गई।

अध्याय तीन में, ब्रह्म का वर्णन नाना प्रकार से हुआ एवम् ब्रह्म का साक्षात्कार ही मुक्ति का मार्ग बतलाया गया।

अध्याय चार में, सद् बुद्धि के लिए ईश की स्तुति की गई, एवम् ब्रह्म के स्वरूप और महत्व का वर्णन हुआ।

अध्याय पाँच में, विद्या-अविद्या तथा परमेश्वर के स्वरूप और महात्म्य का वर्णन हुआ। जीव के भिन्न-भिन्न योनियों में जन्म का कारण कर्म संस्कार बतलाया गया।

आगे, अन्तिम अध्याय छह में, परमेश्वर की महिमा से सृष्टि चक्र के संचालन की चर्चा होती है। उनका महात्म्य बतलाए जाते हैं। मित्र !—सो सुनिए—

महर्षि श्वेताश्वतर आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! कोई-कोई मेधावी जन बतलाते हैं कि सृष्टि का संचालन स्वभाव व कालवश हो रहा है। वे प्रकृति को ही कर्त्ता-धर्त्ता मानते हैं। वे अविवेकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और विषयी होने के कारण यथार्थ नहीं जानते । वास्तव में, यह संसार-चक्र ब्रह्म की महिमा में चल रहा है ।

१

सारा विश्व ब्रह्म से व्याप्त है । वह ज्ञान स्वरूप है । वह काल का भी कर्त्ता है । वह निष्पाप है । गुणी और सर्वज्ञ है । उसी ब्रह्म से प्रेरित होकर, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश आदि नियमित रूप से संचालित हो रहे हैं ।

२

ब्रह्म कर्मों को रचकर, उन्हें कार्यान्वित होते देखता है और निरीक्षण करता है । फिर जीवात्मा का अपने पृथ्वी आदि दो-तीन या आठ तत्वों के साथ संयोग करता है । अथवा इनका योग काल और अन्तःकरण के सूक्ष्म गुणों के साथ करता है ।

३

मित्र ! संसार में जो कुछ भी हो रहा है एवम् जो कुछ कि न हो रहा है—सब एक मात्र ब्रह्म की प्रेंरणा से हो । सब कुछ उसी से प्रेरित हो रहा है ।

प्यारे मित्र ! गीता में भगवान श्री कृष्ण ने ऐसा कहा है,—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार—ये मेरी आठ प्रकार की प्रकृति है ।

महर्षि आगे बोले—

प्यारे शिष्यो ! जो प्राणी सत्वादि गुणों से युक्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपने कर्म एवम् समस्त भावों को भगवान को समर्पित कर देता है, उसे कर्म-फल नहीं व्यापते। उसके पूर्व कृत कर्म भी शनैः शनैः क्षय हो जाते हैं। कर्म संस्कार के नाश होते ही प्रकृति से परे ब्रह्म की प्राप्ति हो जाती है।

४

ब्रह्म ही सबकी उत्पत्ति का कारण है। वही जीव को देह धारण कराता है। वही विद्या है; वही अविद्या है। वही शुभ कराता है; वही अशुभ कराता है। वही भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान—तीनों कालों से परे है। ये सब उसी के अधीन हैं। इसके प्राण से लेकर नाम पर्यन्त कोई कला नहीं है—यह कलाहीन है। यह निष्प्रपंच है। विश्व को उत्पन्न करने वाला यह विश्वरूप है। ऐसा वह ब्रह्म प्राणियों के हृदय में ही विराजमान है। जिनके हृदय में ज्ञान का उदय नहीं हुआ हो—वे भी उपासना द्वारा उस ब्रह्म की प्राप्त करें। यह उपासना द्वारा प्राप्य है।

५

ब्रह्म ही, इस संसार-प्रपंच का प्रेरक और संचालक है। वह संसार वृक्ष और कलाकार से परे है। उनसे श्रेष्ठ है। वही ऐश्वर्यादि का स्वामी है। वही धर्म कराने वाला है। वही पाप का नाश कराने वाला है। विश्व को धारण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करने वाला , वह अमृत स्वरूप ब्रह्म हृदय में बिराजमान है। उसे प्राप्त करें।

६

प्यारे संन्यासियो ! ब्रह्म ही परम महेश्वर है। वही इन्द्रादि देवताओं का परम देव है वही प्रजापतियों का परम पति है। वही अक्षर से परे है। वही भुवनों के ईश्वर भुवनेश्वर है। ऋषि श्वेताश्वतर कहते हैं—"मैं उस वन्दनीय देव को जानता हूँ।"

७

वह ब्रह्म बड़ा विलक्षण है। उसे न शरीर है न इन्द्रियाँ। उसके समान कोई नहीं दिखता। उससे बढ़कर भी, कोई नहीं दिखाई देता। न सुना ही जाता। उसकी परा शक्ति नाना प्रकार की सुनी जाती है। उसका ज्ञान स्वाभाविक (प्राकृतिक) है। वह स्वयम् ज्ञान है। उसे सब कुछ ज्ञात है। उसका बल भी स्वाभाविक है। उसके बल का कोई अतिक्रमण (अवहेलना) नहीं कर सकता।

८

मेरे प्यारे मित्र ! ऐसा विलक्षण वह ब्रह्म है। उसे जानने का प्रयास करें।

महर्षि आगे बोले—

प्यारे संन्यासियो ! उस ब्रह्म का लोक में कोई स्वामी नहीं है। उसका कोई शासक भी नहीं है। उसका

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कोई चिह्न भी नहीं है। वह तो अशरीरी है। वही सब का उत्पत्ति कर्त्ता, इन्द्रियों का अधिष्ठाता (स्थापित करने वाला) सभी जीवों का स्वामी है। उसका न कोई कर्त्ता है; न स्वामी है।

९

जिस प्रकार मकड़ी अपने भीतर से उत्पन्न तन्तुओं से ही अपने को घेर लेती है; उसी प्रकार देव (ब्रह्म) ने भी स्वभावतः ही प्रकृति से उत्पन्न कार्यों से अपने को आच्छादित कर रखा है। वही देव हमें ब्रह्म से मिला देवे!

१०

सभी प्राणियों में एक ही देव (ब्रह्म) स्थित है। वह सर्व व्यापक है। वही सभी जीवधारियों की अन्तरात्मा है। वही कर्मों का अध्यक्ष है (उन्हें वही स्थापित, संचालित और नियंत्रित करता है)। वही सभी प्राणियों में निवास करता है। साक्षी रूप में, सब कुछ देखता रहता है। वही सब में चेतनत्व (सज्ञानता) प्रदान करता है। उससे ही सभी चेतना प्राप्त करते हैं। वह शुद्ध और निर्गुण—सत्व, रज और तम गुणों से रहित है।

११

वह परमात्मा अद्वितीय और स्वतंत्र है। वह बहुत से निष्क्रिय जीवों के एक बीज को अनेक रूप कर देता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। अपने ही अन्तःकरण में स्थित उस परमात्मा को जो बुद्धिमान देखते हैं, वे नित्य सुख भोगते हैं। वह सुख औरों को नहीं प्राप्त होता।

१२

वह ब्रह्म ही नित्यों में नित्य (शाश्वत) है। उसके नित्यत्व से ही उनका भी नित्यत्व है। वही चेतनों में चेतन है। वही उनको चेतन बनाता है। वह अकेला ही बहुत-से जीवों को भोग प्रदान करता है। सांख्य योग द्वारा वही जानने योग्य है। उस प्रकाश स्वरूप देव को जानकर, प्राणी सभी प्रकार के बन्धनों से मुक्त हो जाता है। उसके अविद्यादि क्लेश दूर हो जाते हैं। वह जीवन मुक्त हो जाता है।

१३

उस ब्रह्म में न सूर्य प्रकाशित होता है, न चन्द्र न तारे ही। न बिजलियाँ ही वहाँ चमक पाती हैं। फिर अग्नि का क्या कहना ! वह वहाँ क्या प्रकाश सकेगी !! वह ब्रह्म स्वयम् प्रकाश है। वह स्वयम् प्रकाशित होता है। ये चन्द्र, सूर्य; तारे आदि उसके प्रकाश से ही प्रकाशित होते हैं।

१४

इस संसार के मध्य में हंस रूप परमात्मा जल रूप देह में स्थित है। अविद्यादि को दग्ध करने वाला वह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अग्निरूप भी है। उस ब्रह्म को जानकर, जीव जन्म-मरण को तर जाता है। इसके सिवा कोई दूसरा मुक्ति का मार्ग नहीं है।

१५

ब्रह्म ही विश्व का कर्त्ता है। वही विश्व को जानने वाला है। वही सबकी आत्मा और उत्पत्ति-स्थान है। वह निष्पाप, निर्लेप और गुणवान है। वही सम्पूर्ण विद्याओं का आश्रय है। यही प्रकृति और जीव का अध्यक्ष है। वही सत्य, रज और तम, तीनों गुणों का नियामक है। संसार के मोक्ष, स्थिति और बंधन का विधायक भी वही है।

१६

ब्रह्म ज्योतिर्मय (प्रकाशमय) है। उसके प्रकाश से ही विश्व प्रकाशित है। वह अमरण धर्मा है। उसकी मृत्यु नहीं होती। वह ईश्वर रूप में स्थित है। वह ज्ञाता (जानने वाला) है। वह सर्वत्र जाने वाला है और जग का रक्षक है। वही सर्वदा जगत का शासन करता है। कोई दूसरा इस जगत का शासन करने में समर्थ नहीं है।

१७

सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्म ही ब्रह्मा को रचता है। वही लोक हित ब्रह्मा के लिए वेदों को प्रवृत्त (नियुक्त)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

करता है। बुद्धिमान ब्रह्मवेत्ता उसी को जानकर, उसमें ही मन को पिरोवें। उसी की शरण में जावें।

१८

ब्रह्म कलाहीन है—उसके अंग नहीं हैं। वह निष्क्रिय शान्त, निर्दोष और निर्लेप है। वह मुक्ति के लिए सेतु के समान है—वह संसार-सागर से पार होने का साधन है। जिसका इंधन जल चुका उस धुँआ रहित अग्नि के समान देदीप्यमान है। हम उस ब्रह्म की शरण में जावें।

१९

जिस समय लोग चमड़े के समान आकाश को लपेट लेंगे, उस समय भी बिना ब्रह्म को जाने, हमारे दुःखों का अन्त नहीं होगा। आकाश को चमड़े की तरह लपेटना असंभव है। अगर वह सम्भव हो भी जाय—तो भी बिना भगवान को जाने, दुःखों का अन्त होना सम्भव नहीं है।

२०

प्यारे मित्र! श्वेताश्वतर ऋषि ने अपने तपोबल एवम् कृपा से उस ब्रह्म को जाना। और इस पवित्र परम्परागत् ब्रह्म तत्व का उपदेश अधिकारी संन्यासियों को समुचित रूप से दिया।

प्यारे मित्र! बिना पूर्ण वैराग्य के ब्रह्म ज्ञान उपदेश निष्फल होता है। अतएव, जिनको विरक्ति न आई

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हो उन्हें ब्रह्मतत्व का उपदेश न देवें। वे ब्रह्म ज्ञान के अधिकारी नहीं हैं।

प्यारे मित्र! उपनिषदों में, इस परम गोपनीय ब्रह्म तत्त्व का उपदेश पूर्व कल्प में किया था। मित्र! जिसका चित्त अत्यन्त शांत न हो, उसे तथा जो पुत्र या शिष्य न हो, उसको भी इस ब्रह्म विद्या का उपदेश न देवें।

२२

प्यारे मित्र! जिसको परमात्मा और गुरु दोनों में एक सी परम भक्ति रहती है, उस महात्मा से कही ब्रह्म विद्या ही प्रकाशित होती है।

२३

प्यारे मित्र! सारे श्वेताश्वतर उपनिषद् की चर्चा समाप्त हुई। इसके उपदेशों को जीवन में उतारने का प्रयास यावत-जीवन करते रहें। ब्रह्म को जानें। हम ही ब्रह्म हैं, इसकी स्थिति दृढ़ करें। अपने आपको देह मान, देह से प्रीति न करें। अपने को पहचानें। ब्रह्म होकर, दीन-हीन न बने रहें। सतत प्रयास से अन्तःकरण पर पड़ी काई धोवें। काया निर्मल करें।

मित्र! चित्त पर पड़े कर्म-संस्कार को मिटावें। चित्त से उनके दाग को उठावें। फिर तो विशुद्ध चित्त में प्रभु स्वयम् प्रकाशित होंगे। अपने दर्शन आप देंगे।

मित्र! मूल ग्रन्थ की चर्चा के सिवा आप से व्यक्तिगत रूप में बहुत कुछ कहते आया हूँ। उन्हें पढ़े और गुनें। भला लगे तो जीवन में उतारें। कुछ नहीं तो प्यारवश ही पढ़ें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भगवान आपकी साधना फलवती करें। आपको सुख-शान्ति देवें।

आपकी प्रेरणा से, मैं अध्यात्म क्षेत्र में उतरा, इसके लिए जितनी बार भी आपको धन्यवाद दूँ—कम ही होगा। वास्तव में, मैं आपका भारी अभारी हूँ। आपकी सेवाओं की कीमत आँकी नहीं जा सकती। चुकाई नहीं जा सकती।

अनन्त शुभ कामनाओं के साथ, आपको पुनः प्रणाम !

आपका आत्मरूप

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वाल्मीकिविद्यापीठपुस्तकालयः

प्रत्यावर्तनतिथिः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वेदा
श्वेताश्वत
प्रक

लेखक की कृतिर

(१) गीतामृत (भगवद्गीता का सरल
(२) कठोपनिषद् प्रकाश (कठोपनिषद् की
(३) योग वाशिष्ठ प्रवेश
(४) मेघदूत दर्शन
(५) मनुस्मृति संदेश
(६) हमारी संस्कृति छवि
(७) स्नेहभरी कहानियाँ
(८) आध्यात्मिक पत्र
(९) सियावर राम
(१०) पातंजल योग प्रकाश
(११) संत समागम
(१२) मुण्डकोपनिषद् प्रकाश
(१३) श्वेताश्वतरोपनिषद् प्रकाश
(१४) केनोपनिषद् प्रकाश
(१५) कृष्ण-कन्हैया
(१६) हमारी तीर्थ यात्रा
(१७) महाभारत कथा

प्राप्ति-स्थान

१—गणेश चौबे
नामदा बस्ती, क्वाटर नं० ११,
न्यू ले आउट, पो० गोलमुरी, जमशेदपुर, बिहार।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu